काव्य-संस्कृति से रससिक्त

भारत का

प्रथम महाकाव्य

बाणाम्बरी

पोद्दार रामावतार अरुण

•

काव्यकार

सत्य और स्वप्न

भारत के सांस्कृतिक इतिहास में कादम्बरी और हर्षचरित के विश्व-विख्यात रचयिता महाकवि वाणभट्ट का स्थान अधिक महत्त्वपूर्ण है। उन्हें गद्य-साहित्याकाश का आदि चन्द्र-सूर्य कहा जाय तो इसमें कोई अत्युक्ति नहीं। उनके काव्य-जीवन का जन्म उस समय हुआ जब सभी दृष्टिकोण से आर्यावर्त के कनक-काल का अन्तिम वसन्त अपनी चरम सीमा पर आन्तर और वाह्य सुगंध का स्वर्गीय विस्तार कर रहा था। इसलिए महाकवि कालिदास के वाद वाण में काव्य-शिल्प का जो वैभव दीख पड़ता है, वह अन्यत्र नहीं। व्यास-वाल्मीकि मात्र काव्यकार ही नहीं, ऋषि-महर्षि भी थे।

विहार के हिरण्यवाह शोण-तट पर अवस्थित प्रीतिकूट ग्राम की पुण्यमयी मिट्टी नमस्य है, जिसे भारती के अमृतपुत्र वाणभट्ट को जन्म देने का गौरव प्राप्त हुआ। सचमुच विदेह और वुद्ध की दार्शनिक वसुधा पर वाण और विद्यापति के रूप में दो ऐसे कलाकार भी उत्पन्न हुए जिनसे अमर साहित्य की श्रीवृद्धि हुई। ऐसा प्रतीत होता है कि एक शव्द-सिन्धु के महाशिल्पी थे और एक भाव-तरंगों के महान् गीतकार। दोनों ही अपने-अपने क्षेत्र के पथ-प्रदर्शक सिद्ध हुए। किन्तु, काव्य-वैभव की उपलव्धि में दोनों महाकवियों में मात्र विभिन्नता ही नहीं, ऐश्वर्यशालीनता में भी प्रगाढ़ अन्तर हो गया क्योंकि वाण भारत-सम्राट् के विशाल-स्कंधावार में रहते थे और विद्यापति तिमिरग्रस्त देश के एक लघु राज्य के पर्ण-प्रासाद में। दोनों ही शिव से अनुप्राणित थे, किन्तु सत्य-सौन्दर्य की स्थापना में इतिहास ने दोनों को भिन्न-भिन्न भाग्य प्रदान किया था। यही कारण है कि मुझे विद्यापति के भावालंकृत जीवन में सर्वप्रथम गीतिप्रवंध की झलक मिली, पर वाण के विस्तृत, चमत्कृत और शिल्प-विभूषित जीवन-रहस्य में एक महाकाव्य का आभास मिला।

निःसन्देह विद्यापति ने रविठाकुर को भी उनके प्रारंभिक काव्य-जीवन में गीति-प्रेरणा दी थी पर अपनी प्रौढ़ावस्था में रवीन्द्रनाथ को लिखना पड़ा कि "हम साहसपूर्वक कह सकते हैं कि संस्कृत कवियों

में बाणभट्ट की भांति चित्रांकन में कोई निपुण नहीं हुआ। समस्त कादम्बरी काव्य एक चित्रशाला है। साधारणतः लोग घटना वर्णन करके कथा प्रारंभ करते हैं, पर बाणभट्ट चित्र-सज्जित करके कथा बढ़ाते हैं। जिसने ऐसे प्रेम-सहित चित्रों के सौन्दर्य का उपभोग नहीं किया, उसका दुर्भाग्य ही समझना चाहिए।" वस्तुतः काव्यालोचना के लिए उक्त उद्धरण प्रस्तुत नहीं, अपितु महाकवि बाण के कलात्मक स्थापत्य की ओर एक सूक्ष्म इंगित देना ही मेरा आन्तरिक अभिप्राय है क्योंकि बाण और विद्यापति के स्वर-समारोह में पर्याप्त अन्तर है, कदाचित् उतना ही जितना दिव्य अजन्ता गुफा और शुभ्र देवालय में वीणा और बांसुरी-वादन का। एक ओर इतिहास की पुत्री भरतमुनि के नाट्य-शास्त्र की निपुणिका है तो दूसरी ओर भाव-प्रधान कथा की कन्या, व्रज-विलास की गीतिका।

और, प्रीतिकूट का वात्स्यायनवंश जिसमें बाणभट्ट उत्पन्न हुए, मगध में मिथिला की आत्मिक अरुणिमा से तो ओतप्रोत था ही। हर्ष-चरित में वर्णित सूक्ष्म आत्म-कथा में स्वयं बाण ने अपने ब्राह्मण-परिवार को वेदाभ्यासी और कर्मकांडी माना है। इस प्रकार विद्यापति की पूर्व आत्मा बाण की जन्मभूमि में वास करती थी और शोणभद्र ने बागमती या कोशी अथवा गंडकी को कितना अनुप्राणित किया, यह कौन कहे? मुझे गंगा के इस पार और उस पार में एक ही दर्शन की ज्योति दीख पड़ी।

बाणभट्ट का जीवन भी एक महाकाव्य था। उनके सर्गबद्ध अभियान में चपलता और अमरता के वरदान छुपे थे। उनकी आंखों में मधुरता, उत्सुकता, नैसर्गिकता और काव्य-प्रखरता के साथ-साथ मर्मस्थल की दिव्यता भी दृष्टिगोचर होती थी। प्रारंभ में उन्होंने जीवन को नहीं पहचाना बल्कि जीवन ने ही उन्हें पहचान लिया। उनमें जन्मजात प्रतिभा थी। परिस्थिति और पिपासा ने अनेकानेक वर्षों तक देशाटन के लिए उन्हें बाध्य किया। गृह-समृद्धि को त्याग कर उन्होंने उस रागात्मक कला का आलिंगन किया जिसमें विराग का स्वप्न-संयोग ऐतिहासिक और काल्पनिक काव्य-क्रीड़ा कर रहा था। कला-ईश्वरता से ओतप्रोत वह एक ऐसे उदित नक्षत्र थे जिनकी भविष्यमयी आभा में सूक्ष्मतम महत्ता व्याप्त थी। बाण को रंगों का देवता कहना चाहिए। उन्होंने प्रकृति और जीवन की जो प्राण-चुम्बी चित्रकारी की है, वह विश्व की शाश्वत साहित्य-प्रदर्शनी में आज भी अपनी अद्वितीय श्रेष्ठता से गौरवान्वित है।

सातवीं शती के स्वर्णोदय में सम्राट् हर्षवर्द्धन ने अपने पौरुष पराक्रम और व्यक्तित्व-माधुर्य से इतिहास के काल-मंदिर में एक रत्नदीप जला दिया। किन्तु उनकी दीपशिखा पर कलात्मक प्रसून-पंखुड़ियाँ विखराने वाले महाकवि वाण ही थे। उस समय नालंदा विद्यापीठ अपने सर्वोच्च शिखर पर पहुँच चुका था। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग भी नालंदा में भारतवर्ष के प्राण-मंत्र का अध्ययन कर रहे थे।

इस काव्य-पुस्तक के प्रणयन में यों तो अनेक शोधग्रंथ सहायक हुए पर विशेष रूप से मैं डा० वासुदेव शरण अग्रवाल का आभार मानता हूँ जिन्होंने 'हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन' में वाण की प्राण-कली को काव्यात्मक कर से सर्वप्रथम खोलने का कमनीय और कठिन कार्य किया। और, डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने वाण-सम्बन्धी अपने रोचक उपन्यास में वह सिद्धि प्राप्त की जहाँ महाकवि की मनोवैज्ञानिक और सूक्ष्म कल्पनाएँ काव्य-क्रीड़ा और आत्म-सत्य का एक नवीन वरदान माँग रही थीं। गहन गद्य ने वाण के मस्तिष्क में साधिकार प्रवेश किया, पर उस अमर काव्यकार का विशाल कोमल हृदय स्यात् सृजन-सत्य के लिए मौन हाहाकार भी करता रहा। प्रसिद्ध आत्मकथा में प्राण-व्यथा के मर्म का अमिट स्पर्श तो हुआ किन्तु काव्य और कवि-जीवन की अन्तरात्मा किसी ऐसी हृदयग्राहिणी कल्पना की प्रतीक्षा कर रही थी जो स्वाभाविक अनुभूति की इन्द्र-पुरी से निकलती है। चन्द्रमा ज्योत्स्ना विखराता है, पर ऐसी ज्योत्स्ना जो विना चाँद के विखरे, उसे देखकर तो आश्चर्य होगा ही। और, इसी उत्तेजक आश्चर्य के काव्य-उदयाचल पर इस 'वाणाम्वरी' का अवतरण हुआ जहाँ कल्पना इतिहास की शरत्शालिका पर खड़ी होकर अपने अतृप्त मुख में चन्द्र-प्रवेश का स्वर्गीय स्वप्न देखती है।

आधुनिक हिन्दीकाव्य-चतुरानन : प्रसाद-निराला-पन्त-महादेवी के सम्मिलित संकेत से अभिव्यंजित मौलिकता के छन्दायित सूक्ष्ममार्ग पर रचित अपने शिल्प-सौन्दर्य और अभिव्यक्तियों के सम्वन्ध में विशेष स्पष्टीकरण की अनधिकार चेष्टा करना मेरे लिए शोभनीय नहीं। भारत की प्रमुख प्राचीन भाषाओं की काव्य-संस्कृति और प्रगति-चेतना का साहित्याभास इस प्रवंध पर पड़ना परम्परागत अनिवार्य था। वाण-विन्यास की विकास-कथाशृंखला के रक्षार्थ एक रहस्यात्मक घटना का उल्लेख कर देना आवश्यक प्रतीत होता है :

काल-संयोग से १९५३ ई० की ग्रीष्म-ऋतु में यूरोप-भ्रमण के लिए मैं सर्वप्रथम इंग्लैण्ड गया। उस दिन लंदन स्वप्नलोक की भाँति सुसज्जित

था। ठंढी हवा के झोंके और अनवरत वर्षा के कम्पित काल में महारानी एलिजाबेथ का राज्याभिषेक-समारोह मनाया जा रहा था। विश्व के विविध भाग से उपस्थित दर्शक लंदन की राजकीय रम्यता देख रहे थे। सतरंगिनी महिलाएँ पुष्पित उद्यान-सी दीखती थीं। राजमार्ग के दोनों ओर असंख्य नर-नारी खचाखच भरे थे और उल्लसित उत्सुकता से शोभायात्रा के प्रतीक्षा-काल में अपने रेशमी रूमाल और चर्म-मंजूषा से टोस्ट, बिस्कुट, केक आदि निकालकर वृक्षों की सघन छाया मे खड़े-खड़े खा रहे थे। थोड़ी-थोड़ी दूर पर मनुष्य-पंक्तियों के पार्श्व भाग में सामयिक टी-स्टॉल (चाय की दुकान) पर युवक-युवतियों और वृद्ध-वृद्धाओं की भीड़ लग जाती थी। अत्यधिक शीत की थरथराती वेला में गुलाबी बच्चे आइसक्रीम भी चूस रहे थे।

सहसा शोभायात्रा प्रारंभ हुई। सबकी आँखें दृश्यावलोकन में तल्लीन-सी हो गईं। इसी समय इतनी वर्षा हुई कि रंग-विरंगे छातों के पंख खुल गए। मेरे ओवरकोट पर भी मेघ के मोती झरने लगे। सिगार और सिगरेट के धुएँ से साँसों में किंचित् उष्णता का आभास हुआ।

जुलूस अपनी जवानी पर था। अलंकृत अश्वो पर राजवस्त्र-सज्जित सैनिक इन्द्रधनुषी तरंगों की तरह मन्द-मन्द टाप मारते चले जा रहे थे। विविध वाद्य-वृन्द से तुमुल घोष निकल रहा था। रॉलसरॉयस मोटरकार पर आसीन प्रधान मंत्री सर विन्स्टन चर्चिल के बाद राजकीय फिटिन पर भारतीय नेता पं० नेहरू अपनी पुत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी के साथ आते दिखाई पड़े। अन्य विश्व-नागरिकों की भाँति भारतीय दर्शकों ने भी उन्हें देखकर सामूहिक हर्षध्वनि की।

एक विदेशी महिला जो लगभग अस्सी-पचासी की अवस्था में अपने ओवरकोट में एक उजली बिल्ली छुपाए थी, श्री नेहरू को देखते ही बाएँ हाथ को बार-बार ऊपर उठा कर अभिवादन करने लगी। मैंने खूब गौर से उसकी ओर देखा। उसकी नीली आँखें हँस रही थीं। दिव्य मुख पर झुर्रियों का जाल बिछा था पर होठों पर एक सजीव मुस्कान व्याप्त थी। कुछ ही देर पहले उसने एक केक मुझे भी खाने को दिया था। किसी बूढ़ी दादी के स्नेह-साम्राज्य में अपने आपको पाकर मेरी आँखों में कुछ फूल खिलने लगे थे।

महारानी की सवारी आने के पूर्व ही उस दादी ने मुझसे कुछ बातचीत करनी प्रारंभ कर दी। मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि

बारह-तेरह साल पहले वह भारत में रह चुकी है। यह जान कर तो और भी आश्चर्य हुआ कि यह बूढ़ी दादी शान्तिनिकेतन की आस्ट्रिया-वासिनी वही दीदी है जिसने डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी को 'वाणभट्ट की आत्मकथा' दी थी। संभ्रान्त ईसाई परिवार की उस आत्म-साधिका मिस कैथेराइन के दिव्य दर्शन से मुझे भी कुछ ऐसी अज्ञात वस्तुएँ मिलीं जो अबतक किसी को प्राप्त नहीं हुई थीं।

भारतीय कोहनूर से गौरवान्वित राजमुकुट को धारण करनेवाली सम्राज्ञी एलिजाबेथ जब स्वर्णालंकृत रथ पर आरूढ़ होकर दीदी के प्रसन्न नेत्रों के सम्मुख आई तो कदाचित् उसे ऐसा लगा कि सम्राट् हर्षवर्द्धन की नवविवाहिता बहन राज्यश्री स्थाण्वीश्वर के सुसज्जित राज-मार्ग से अपने पति महाराज ग्रहवर्मा के साथ कान्यकुब्ज की ओर प्रस्थान कर रही है।

दूसरे दिन वेस्ट (पश्चिम) लंदन के एण्ड्स्लेहोटल में कैथेराइन दीदी के पुनः दर्शन हुए। ब्रेकफास्ट (जलपान) के समय वह महावृद्धा अपनी काल्पनिक तन्मयता में शोणभद्र के अतीतकालीन काव्य-कछार पर बैठकर मन-ही-मन महाकवि वाण से कदाचित् कुछ प्रश्न पूछने लगी। उसकी बुदबुदाहट सुनते ही मैं चाय की चुस्की छोड़कर ध्यान-मयी दीदी की अन्वेषिणी मुद्रा को देखने का निष्फल प्रयास करने लगा।

उसी दिन मुझे तत्कालीन भारतीय राजदूत से मिलना था। किन्तु दीदी के दीर्घ वार्तालाप के कारण मैं इंडिया-हाउस में कुछ विलम्ब से पहुँचा।

दीदी के साथ मुझे बृटिश म्युजियम (संग्रहालय) में कई बार जाना पड़ा। जब वह मुझसे संस्कृत और पाली में बोलने लगी तो मैं चुप हो गया। और, वह किंचित् विहँसती हुई हिन्दी में बोली : तू संस्कृत नहीं जानता है तो वाणभट्ट पर काव्य कैसे लिखेगा रे?

एक दिन टेम्स के तट पर मेघाच्छादित संध्या में जब जहाजों के कुली भी थक कर बैठ गए थे, दीदी ने राजगृह और नालंदा की कुछ प्राचीन बातें कहीं। उसकी झोली में संग्रहित कुछ ऐसी पाण्डुलिपियाँ भी देखीं जो अवश्य ही अनेक रहस्यात्मक सत्य प्रकट कर सकती थीं। किन्तु अंधेरा हो चुका था। हम वेस्ट मिनिस्टर अबे के सामने टेम्स के पुल पर खड़े थे। सहसा दीदी ने कहा—"बर्नड शॉ ने ठीक ही लिखा है कि दुनिया की सभी आत्मकथाएँ झूठी हैं, केवल गाँधी-जैसे कुछ महात्माओं ने सत्य का आश्रय लिया है।" दीदी फिर बोली—

बाणाम्बरी

सर्ग पृष्ठ

बाणाम्बरी

प्रथम सर्ग

चन्द्रकलश को उठा स्कंध पर चली पार्वती
निकली किरण-क्वणित इन्द्राणी उषा-उर्वशी
बाणारुण-रन्ध्रिता स्मिता भावाकुल भाषा
अत्रि-लालसा-अभिव्यंजित उदयाचल-आशा

स्फुटित प्रात का ज्योति-पद्म नभ-नील सिन्धु में
रंजित रश्मि-पराग-रेणु हिम-बिन्दु-बिन्दु में
मलयमुग्ध मन्दानिल भैरव रागाच्छादित
प्रीतिकूट आलोक-ऋचाओं से अनुप्राणित

वैदिक भारत का प्रकाश विकसित प्रभात में
शुद्ध सभ्यता का संस्कृति-स्वर श्वास-वात में
ज्ञानपुरुष ऋषि चित्रभानु ध्यानाश्रित भूपर
मंत्रोचित हवनाग्नि-शिखा उठती अब ऊपर

जीर्ण-शीर्ण देहाङ्ग दीप्त श्रम-स्वेद-प्रवाहित
परम्परागत मंत्रोच्चारित मन अनुशासित
धूम्रावृत समिधा-सुगंधि में लिप्त निकेतन
नित्य नियमपूर्वक होता आध्यात्मिक चिन्तन

वत्स-वंश विख्यात सकल उत्तर भारत में
देव-विभा थी व्याप्त वाणि-सुत सारस्वत में
महाशोण में ब्रह्म-स्रोत अन्तर-परिलक्षित
वाद्यवृन्द पर साम-गान कानन में मुखरित

ज्ञानदान में चित्रभानु हो जाते तन्मय
शब्द-कुसुम से छात्र-भृंग करते मधु संचय
स्वर-वृन्तों पर श्लोक-सुपर्णा-ध्वनि दादुर-सम
स्थान-स्थान पर नृत्य-निवेदित चरण झमाझम

हिमगिरि को भी चित्रभानु दिग्देश दिखाते
शीलभद्र : कुलपति, नालंदा से जब आते
शोणभद्र में सागर की गहराई भी है
जल पर तुंग हिमालय की परछाईं भी है

दूर-दूर से शास्त्र-पथिक जब आया करते
जीवन-दर्शन-घन जन-मन पर छाया करते
भानु-मुखश्री -स्वेद पोंछती स्वयं भारती
दृढ़तर पग डगमग करते तो वह सँवारती

तत्त्वपुरुष निज त्याग-ज्ञान के बीच खड़ा है
उन्नत मस्तक आदि काल से ही निखरा है
दिव्य तथागत-तप से भी वह नही डरा है
उसका प्रखर प्रकाश प्राण-भू पर बिखरा है

मिटी आज तक नही आत्म-अनुरंजित भाषा
मनु-पुत्रों में सूक्ष्म ज्ञान की चिर जिज्ञासा
कर्मयोग में रक्षित अनासक्ति-अभिलाषा
महामुक्ति ही मानवता की है परिभाषा

वहिर्जगत ही नही सत्य, कुछ भीतर भी है
मर्मस्थल मे प्राण-तत्त्व का निर्झर भी है
आत्म-नयन से भी भारत ने भव को देखा
काल मिटा पाता न ज्योति की जीवित रेखा

वही बुद्ध-निर्वाण जहाँ अणु-तत्त्व-ज्ञान है
प्राण-दान से प्रखर मनुज का आत्म-दान है
जीवन जिस पर आता वह एक ही यान है
एक दृष्टि के लिए सृष्टि में विविध ध्यान हैं

चिर विराट की लीला स्वयं प्रकृति की क्रीड़ा
केवल सुख ही नही, व्याप्त कण-कण मे पीड़ा
चित्रभानु-संकेत कि मानव कर्म कठिन है
सूक्ष्माभास यही कि यहाँ निशि में भी दिन है

कर्मभूमि का मर्म कि अन्तरतर विकसित हो
आत्म-गंध से प्राण-पुष्प प्रतिपल स्पंदित हो
सुमधुर, सुदृढ़ अचंचल स्वर से मन मुखरित हो
विचलित वेला मे भी उर मे किरण उदित हो

शिष्यश्रेणि ! मैं आज न विद्या-दान करूँगा
शिशु-मुख-दर्शन-उत्सव में अति व्यस्त रहूँगा
गेहाङ्गन में गुंजित होंगे गायन-वादन
ध्रुपद-गीत कलकंठ करेंगे राग-स्वस्त्ययन

रुको वत्स, कण्वाश्रम-सुधि-आवृत मन मेरा
च्यवन-धूलि पर शाकुन्तल-अवतरण-सवेरा
भापाम्बर में भानु चन्द्र-रस-सिंचित किंचित
नेत्र-नीड़ में ज्योति-क्रौंच आनन्द-तरंगित

प्राकृत वर्णन करूँ या कि दूँ संस्कृत-उपमा
उत्तर की दिखलाऊँ या दक्षिण की सुपमा
मेघदूत ही तुम्हें सुनाता यदि घन रहता
नभ की नील नदी पर अलका तक मैं बहता

कमल-केलि-वन में उतार देता सपने को
दो क्षण आज वहीं खो देता मैं अपने को
किन्तु घटा है कहाँ, छटा की मधुवेला है
कुंज-कुंज में मुकुल-कुसुम-कलिका-मेला है

कल अन्तर्हित सांख्य-सत्य-स्वर-अर्थ करूँगा
बुद्धि-पात्र में गहन चेतना-सुधा भरूँगा
विचरूँगा दर्शन-अरण्य-गिरि-पथ-उपवन में
भर दूँगा मैं सहज ज्ञान स्थिर उत्सुक मन में

बीते द्वादश वर्ष, काल-गति बढ़ती जाती
वयाम्बरा में तीव्र धूप नित चढ़ती जाती
चित्रभानु की वधू राजदेवी न रही अब
मन की मही सिहरती सुधि उसकी आती जब

जबसे गृहिणी गई,उदासी छाई घर में
स्नेह-सिक्त मुस्कान लुप्त नित प्राण प्रखर में
सुख-चुम्बन से मुकुलित मुख पर लाली आई
असमय में ही हरित मातृलतिका मुरझाई

अश्रु जगा कर चली गई शिशु-शोभित जननी
बाल चन्द्र से दूर हुई बासन्ती अवनी
चित्रभानु ! मत सिसक, काल निष्ठुर होता है
मनुज एक दिन मरण-सेज पर ही सोता है

मैं भी शिथिल हुआ, जीवन का पका आम हूँ
काल-वृक्ष में फला हुआ पीला ललाम हूँ
श्वासों के खंडहर का हूँ मैं दीप पुराना
किस झोंके में कब बुझ जाऊँ, कौन ठिकाना

ऐसा दशरथ हूँ जिसको एक ही राम है
विद्याभ्यास कराना मेरा पुण्य काम है
बाण प्राण-नक्षत्र दीप्त उर-अभिलाषा का
एक प्रात-उद्यान नन्दन अम्बर-आशा का

चंचलता की वायु शास्त्र-वन में लहराती—
काव्य-कुंज में रुक कर शब्द-सुरभि बिखराती
चौदह के वय में ही चाह पकड़ लेता मन
राग-तरंगित वीणा पर छा जाता जीवन

शुष्क पिता के सरस पुत्र में स्वाभिमान भी
गुंजित होते कभी-कभी कल्पना-गान भी
तरल तरंगो पर किशोर-कविता बह जाती
चपल उमंगो पर शब्दावलियाँ अकुलातीं

किन्तु शीलता की सरि मे उन्मत्त ज्वार क्यों?
बाँध तोड़कर निकल भागती हृदय-धार क्यों?
मर्यादा का अश्व भड़कने क्यों लग जाता?
अर्ध निशा में क्यों अबोध जीवन जग जाता?

'भानु-पुत्र निर्लज्ज, चपल, निष्प्रभ अभिनेता?
मंजुल मन में कौन अंध आँधी भर देता?
मुझसे भी क्या मित्रमण्डली सुखदायी है?
वात्स्यायन-नभ में क्यों यह वदली छाई है?

शुभ्र भारती! वाण-नयन में दर्शन भर दो
अन्तस्तल में सरल श्रेष्ठता-चिन्तन भर दो
कितना मैं रोकूँ प्रवाह को? गति ही गति है
लास-प्यास-परिहासयुक्त यह कैसी मति है

निर्भयता के नाग-दंश से तन-मन व्याकुल
रह-रह प्राण प्रकम्पित व्यंग्य-गरल में घुल-घल
वण्ड वादलों के सँग चन्द्र कहाँ छिप जाता?
कौन राहु अन्तराकाश में तम फैलाता?

पुत्र न हुआ सुपुत्र कहीं तो क्या कुल-महिमा
यदि पुनीत भावना नहीं तो व्यर्थ मधुरिमा
वंश-दीप प्रज्ज्वलित रहे, कामना जनक की
धारण करे। हंस क्यों पंकिल पाँखें वक की?

मरण-पूर्व प्रेमिल माता सुत-स्वप्न-जयी थी
ललित लालसा यशोराशि से स्फीतमयी थी
मैंने वचन दिया था, पुत्र महान वनेगा
तिमिर-हरण के लिए ज्योति का वाण वनेगा

किन्तु तरुण तन में न प्रचुर अरुणाभा मन की
चंचल-चंचल हो जाती साँसें यौवन की
विकल वायु उठ रही, दीप को कहाँ छुपाऊँ
बहुत वृद्ध हूँ, कहाँ-कहाँ किरणें बिखराऊँ ?

शोण, तुम्हारे जल में विष तो नहीं मिला है ?
पाप-पंक में प्राण-कमल तो नहीं खिला है ?
वत्स-शिखर आलोकाच्छादित हिम-सा उज्ज्वल
ऋषिकुल-धारा सुर-सरिता-सी पावन, निर्मल

मेरा वाण न वण्ड, कल्पना-व्योम-विलासी
मेरे मन में व्यर्थ व्याप्त है घोर उदासी
प्रीतिकूट की पुण्यभूमि का वह है वासी
मैं उसके मंगल भविष्य का चिर विश्वासी

चाँद देख कर हिलकोरें उठती है मन में
चपल पवन चलता ही रहता यौवन-वन में
दिन में भी नव दृग में निद्रा आती रहती
मधु ऋतु के पहले ही कोयल गाती रहती

सुनी-सुनाई बात हृदय स्वीकार करे क्यों ?
झूठमूठ कह कर कोई उपकार करे क्यों ?
कुसुमित क्रीड़ा भी जीवन का एक अंग है
किसके यौवन में न बजा मन का मृदंग है ?

भव्य भोर में जल-हिलोर लेने दो मन को
तपने दो तारुण्य-किरण से कोमल तन को
स्वप्न-वीथि पर कौन नहीं जाता यौवन में ?
आता अरुणावेग नहीं किसके जीवन में ?

अमृत-सिक्त अनुभव से रस-कलशी भर जाती
सृजन-सिद्धि-हित बुद्धि-ऋद्धि वाणी बिखराती
संगम का सत्संग प्राण को बल देता है—
नयनों में अनुभूति-जलद का जल देता है

शास्त्रों से भी कठिन मनुष्यों का अवलोकन
संघर्षों से अधिक निखर जाता है जीवन
काक-झुण्ड में कोयल कभी न छिपनेवाली
काल-दैत्य भी नित्य उगलता तम में लाली

पादप सकल नहीं गिर पाते झंझानिल से
ज्यों परास्त होते न बली रिपु-बाहु कुटिल से
विरह-ताप से यक्ष मेघ का दूत बना था
नभ में मन्दाक्रान्ता-मिलन-वितान तना था

पुत्र, तुम्हारी तरुणाई प्रतिभा-पुष्पित है
सरस गद्य में पद्य हृदय-तल में गुंजित है
गर्व हो रहा मुझे माधवी मौलिकता पर
खिलता है अध्यात्म सदा ही भौतिकता पर

विना धूल से नेह लगाए कुछ न मिलेगा
विना कीच से कमल कभी भी नहीं खिलेगा
लाज तुम्हारे हाथ, काज मत करो अपावन
प्राण-शोण में भरो न ऊर्मिल तम का गर्जन

बाल पुत्र का वृद्ध पिता होता अति मोही
अन्तर कभी न होने देता सुत-विद्रोही
उसमें भी मैं वधूहीन उड्डीन विहग हूँ
अस्त-व्यस्त अपने जीवन का अन्तिम मग हूँ

यही आत्म-परितोष, अग्नि-संस्कार करोगे
स्मृति-गुम्फित एकान्त क्षणों में दृग भर लोगे
तत्त्व-समीरण जल-हिलोर में होकर झंकृत,—
प्राप्त करेगा मुक्ति परम आनन्दालंकृत

सत्वर विद्यावारिधि बन कर लहराओ तुम
प्रखर किरण-वाष्पित मन के घन बरसाओ तुम
मेरा जीवन-दीप अधिक अब जल न सकेगा
अन्तिम हर्ष विना देखे रवि ढल न सकेगा

पुत्रवधू-मुख देखूँगा ही अस्ताचल पर
छिन्न प्रभा छाएगी अन्तर-सागर-जल पर
नूतन छवि से वात्स्यायन-गृह हो गति-गुंजित
देह-वल्लरी रुचिर स्नेह से हो विधु-विकसित

बिना धूल से नेह लगाए कुछ न मिलेगा
बिना कीच से कमल कभी भी नहीं खिलेगा
लाज तुम्हारे हाथ, काज मत करो अपावन
प्राण-शोण में भरो न ऊर्मिल तम का गर्जन

बाल पुत्र का वृद्ध पिता होना अति मोही
अन्तर कभी न होने देता सुत-विद्रोही
उसमें भी मैं वधूहीन उड्डीन विहग हूँ
अस्त-व्यस्त अपने जीवन का अन्तिम मग हूँ

यही आत्म-परितोष, अग्नि-संस्कार करोगे
स्मृति-गुम्फित एकान्त क्षणों में दृग भर लोगे
तत्त्व-समीरण जल-हिलोर मे होकर झंकृत,—
प्राप्त करेगा मुक्ति परम आनन्दालंकृत

सत्वर विद्यावारिधि बन कर लहराओ तुम
प्रखर किरण-वाष्पित मन के घन बरसाओ तुम
मेरा जीवन-दीप अधिक अब जल न सकेगा
अन्तिम हर्ष बिना देखे रवि ढल न सकेगा

पुत्रवधू-मुख देखूँगा ही अस्ताचल पर
छिन्न प्रभा छाएगी अन्तर-सागर-जल पर
नूतन छवि से वात्स्यायन-गृह हो गति-गुंजित
देह-वल्लरी रुचिर स्नेह से हो विधु-विकसित

द्वितीय सर्ग

मेरी सीता की सजल दृष्टि चिर श्यामा
कैसे कह दूँ आत्मा कितनी अभिरामा
नयनान्धकार में मेरी ऊषा आती
कमनीय कमलिनी खिलखिल कर सकुचाती

सौन्दर्य-सान्ध्य दीपिका-शिखा तम-स्नाता
पूर्णिमा निशा-सी आती अंध सुजाता
यौवनाकाश की अरुणाभा भी काली
कज्जल-कज्जल उज्ज्वल उर की हरियाली

उग-उग उमंग के उडु विलीन हो जाते
मन में गंधाकुल फूल नहीं खिल पाते
लज्जिता पिकी पंचमी निकाल न पाती
मधुऋतु-वयार उठ-उठ कर ही रह जाती

इच्छा की आँधी बार-बार अकुलाई
उर की उर्वशी न स्वर्ग कभी छू पाई
वासन्ती वन में प्राण-कली रोती-सी
अंधी सुन्दरता अनल-स्वप्न ढोती-सी

प्रतिपल मन की सिसकियाँ सुनाई पड़ती
सर्वत्र वेदना की शेफाली झरती
पानी में नयन-मीन प्यासी की प्यासी
कोमला कामिनी प्रबल काल की दासी

उल्लास-हास में छिपा रुदन-अन्धेरा
हो गया मेघमय मेरा स्वर्ण सवेरा
लोचन-वातायन बन्द, कहाँ मैं झांकूँ
पाटल-कपोल का मूल्य किस तरह आंकूँ

कारागृह में चिर बंदी यौवन-ज्वाला
घन-मन-ग्रीवा मे गर्जित विद्युतमाला
श्वासों पर छाई अग्निलता अँगराती
दृग-तम मे लज्जित ज्वालामुखी धुआँती

अभिशप्त पुण्य का भार सहूँ मै कैसे
कुंठित नयनों की बाँह गहूँ मै कैसे
संतप्त धार पर किधर बहूँ मैं कैसे
भीगी बातें भी किसे कहूँ मै कैसे

परिणय-प्रसून को कुचल कहाँ मै जाऊँ
अवसन्न आँधियों से कबतक टकराऊँ
बादल-विद्युत मे रुद्र रागिनी रोती
लालसा-निशा नित उल्काओं को ढोती

झंझा-झकोर में मन-विहंग मडलाता
लांछित अतृप्ति से त्रस्त हृदय झुँझलाता
निस्तब्ध नयन-तल मे अकुलाहट होती
दुर्धर्ष कामना वज्रनाद पर सोती

हे अंध पुजारिन, इन्द्रपुरी मे आओ
आग्नेय स्कंध पर स्पर्श-लता फैलाओ
कर लूँ विधु-वक्षालिगन अन्तर्मन से
आकाश न कुत्सित होता चन्द्रग्रहण से

संकुचित प्राण-वेदना तुम्हारी पावन
अवरुद्ध नयन-नभ में घन-घर्षित सावन
अपराधहीन सुन्दरता कामागंकित
अभिलषित स्फीत माधुरी अरूप अनिच्छित

ऐसी न घटा देखी अबतक जीवन मे
जो बरसे कभी न वाह्य विदग्ध भुवन में
भीतर ही भीतर बरसा करता पानी
करुणा की सरस्वती है मेरी रानी

है अंध कली, पर गंध नयनवाली है
तम के रहस्य मे वह्नि-शिखा-लाली है
हिल-हिल उठती नित हरसिँगार की डाली
देखता दूर से आत्म-केलि मन-माली

रोमांचित रागों से मैं अभी अपरिचित
अव्यक्त व्यथा का विश्व न कथा-प्रदर्शित
मैं मौन दृगों के दर्पण देख न पाता
भौंहो की भाषा पढ़कर मन अकुलाता

वासना-भ्रान्त ऋषिपुत्र रम्यता-रोगी
संयोग-द्वार पर स्तब्ध वसन्त-वियोगी
मैं स्वयं कलंकित हूँ अतृप्त लघुता से
बोझिल हूँ अपनी विकल प्राण-प्रभुता से

निष्ठुर हूँ मै, निर्मल वेणी कल्याणी
मै स्वयं अंध, मै स्वयं एक अभिमानी
मै तटी देख कर केवल चुप रह जाता
नि.शब्द नील जल दूर, दूर बह जाता

अज्ञानी यौवन अंधा हो जाता है
शूलों में फूलों को भी खो जाता है
उर-चुम्बित उर्मि-प्रवाह न देख सका मैं
आनन्द-मरुस्थल-दाह न देख सका मैं

अन्तर्मन के कामना-कुसुम कुम्हलाते——
जब-जब साँसों में भ्रमर-भाव भर जाते
व्याकुल बादल जब उमड़-घुमड़ कर आते
तृष्णा-मयूर पर शर-तुषार बरसाते

जब तड़ित अन्तराकाश छेद छुप जाती
अंधी आँखें तब अधिक विभा बिखरातीं
मैं मन-ही-मन रोकर धोता हूँ दृग को
गतिहीन बना देता हूँ मादक मृग को

पथ पर यौवन-संवेग सदा रुक जाता
जब प्रतनु-तुरंगारूढ़ स्वत्व सकुचाता
अंधी नारी को निरख अंध-सा हूँ मैं
निर्गंध पुष्प-सा, मलिन छन्द-सा हूँ मैं

कुल की मर्यादा भी न शेष जीवन में
क्षोभाग्नि-लपट उठती मेरे मरु-मन में
निर्मम निदाघ से झुलसा हुआ बटोही—
बन गया स्वयं कितना निष्ठुर निर्मोही

पाषाण-पुरुष मैं अधम, न मृदुता मुझमें
गिरि पर चढ़ने की गहन न गुरुता मुझमें
मैं हार गया मर्मरित नेत्र-पतझर से
जाऊँ किस ओर कहाँ, अब अपने घर से

सिद्धार्थ-सदृश गृहिणी परि-त्याग करूँ क्या ?
विधि के प्रहार से इतना भला डरूँ क्या ?
अंधी अधीर आशा को क्यों ठुकराऊँ ?
क्यों नयन-संहिता में अंगार लगाऊँ ?

मैं स्वप्न-सृजन में लीन प्रभात-तपस्वी
मैं महामंत्र से ध्वान्त अजेय मनस्वी
मेरी श्वासों मे वत्सवंश-स्वर-लहरी
विकसित भारत का मैं भावात्मक प्रहरी

मेरे शोणित में आर्य-कला की क्रीडा
मेरे प्राणों में मधुर छन्द की पीड़ा
मै नाट्य शिल्प का एक उदित अभिनेता
मैं शुभ्र शोणनट का साहित्य-प्रणेता

षोडशवय में ही शास्त्रों का ज्ञाता हूँ
सिकता-वेदी पर इड़ा-मंत्र गाता हूँ
हे धर्मवधू मेरी वेणी कल्याणी,
अब क्षमा करो, मेरे दृग में भी पानी

मै वण्ड नही, स्वच्छन्द अखण्ड चितेरा
तम-क्रीड़ा मे भी कला-ज्योति का घेरा
मैं 'भानुभट्ट-सन्तान शब्द-सागर हूँ
कल्पना-किरण से व्याप्त अटूट लहर हूँ

यौवन-विहंग अम्बर में उड़नेवाला
संघर्षो से मै कभी न डरनेवाला
साधना-पथिक जग में जय करनेवाला
मै नहीं कदाचित भूपर मरनेवाला

मैं हूँ भविष्य का अमृतकोष-अधिकारी
मैं सरस्वती का शरत्प्रसन्न पुजारी
मैं हितचिन्तक प्रस्फुटित मित्रमण्डल का
मैं उदित चन्द्र उर-गुम्फित तारक-दल का

मन कृष्ण-केलि-कूजित आरण्यक मग मे
हूँ वर्णहीन मानव ही मेरे जग मे
उन्मुक्त धर्म-भारती कला में रहती
शिव की गंगा प्रत्येक श्वास में वहती

अनुराग-विरागभरी भाषा गंभीरा
द्राक्षा-सी होती मधुर काव्य की पीड़ा
तम और विभा के कौतुक वड़े रसीले
सौन्दर्य-स्वप्न-वन्धन हो जाते ढीले

जव चेतन और अचेतन धारा मिलती
संगम पर ही संवेग-कुमुदिनी खिलती
जव अमिय लहर में भाषा भाव लुटाती
झरते हे झरर-झरर मानस के मोती

साधना-देह में जव विदेह-विधु उगता
कल्पना-हंस तव मन-मुक्तादल चुगता
योगी वह भी जो आत्म-सोमरस पीता
अक्षरारण्य-सौन्दर्य-भोग में जीता

अन्तर्मन उत्सुक अत्र भारत-दर्शन-हित
काव्यात्म-सिद्धि-हित नित मन-प्राण पिपासित
मैं मगधकूप-मण्डूक नहीं, मानव हूँ
कण्टकाकीर्ण दश दिग्पथ का कलरव हूँ

जिज्ञासा की पाँखे पसारता हूँ मैं
सागर-गिरिशृंगों को पुकारता हूँ मैं
सौन्दर्य-भार से झुकी दृष्टि की डाली
मेरी साँसों मे चू पड़ती शेफाली

रचना मे रंजित वर्तमान का स्वर हो
अनुकूल शब्द-विन्यासाकाश प्रखर हो
दृग-घन-वन में द्युति-दीप्त बलाका-श्रेणी
ज्यों जुहीपुष्प-शोभित सुवासिनी वेणी

सर्वालंकारों से भूषित हो भाषा
नव रस-संगम पर स्नान करे अभिलाषा
व्याकरण-सप्त अश्वों के रथ पर छवि हो
रवि-रश्मि-ध्वनित साहित्य-सारथी कवि हो

यति-गति न भंग हो कहीं वाक्य-यात्रा में
दीखे न दोष कुछ कहीं छन्द-मात्रा में
सामासिक पंक्ति-प्रवाह सैन्य-सम निकले
अनुभूति-हिमालय ज्ञान-ग्रीष्म से पिघले

निर्मित हो नव इतिहास-कला का संगम
विचरे सुदूर तक भू के भाव-विहंगम
देशाटन के पश्चात् मिलूँ जनपति से
झकझोरूँ राजमुकुट को प्राण-प्रगति से

पर अंध वधू-विच्छेद अशोभन होगा
नयनों के सावन-घन में गर्जन होगा
क्रन्दित सुधि-पथ पर होगी व्याप्त उदासी
विद्युत-संभार सहेगा नही प्रवासी

गुण-निपुण मित्रमण्डल सहपंथी अविकल
अभिनय अनेक, आनन्द-सरणि के संबल
जाएँगी कलातीर्थ में कुछ नर्तकियाँ
ज्यों देवालय में कलशपूर्ण कामिनियाँ

विचरूँगा राजहंस-सा मैं खग-दल में
ज्यों ग्वाल-गोपिका-संग श्याम सुधि-जल में
कर दूँगा भारत-जनपद को नाट्याङ्कित
होगी दृग-वीणा झंकृत, झंकृत, झंकृत

जाऊँ नालंदा सर्वप्रथम एकाकी
देखूँ बौद्धिक जग-विद्यालय की झाँकी
शैशव में उडु के संग गया था हठ से
था गिरा एक दिन मैं जल-पिच्छिल मठ से

इस बार वर्ष तक शिक्षा प्राप्त करूँगा
विप्रता-पात्र में श्रमण-किरण भर लूँगा
श्री शीलभद्र का स्नेह मिलेगा निश्चय
मानस-मधुकरी करेगी नव मधु संचय

सम्प्रति सहस्र दश छात्र देश-द्वीपागत
हो रही भूमि-भारती साम्य सर्वोन्नत
आदान-प्रदान-रहित प्राणी अज्ञानी
विविधा-सुविधा मे विकसित होती वाणी

नालंदा में मिथिला-दर्शन-दिग्दर्शन
दक्षिण-पश्चिम-ज्ञानोदधि का शिव-मंथन
संस्कृति-संगम पर समन्विता मानवता
पृथ्वी पर उतरी हुई प्रकाश-प्रखरता

पनपी वैदिकता कर्मठता-भाषा में
वेदान्त उदित काव्यात्मक जिज्ञासा में
संकीर्ण शान्ति में होता जन-कोलाहल
आया न काल वह जो पीले हालाहल

मनुजत्व चाहता सर्वमुक्ति का साधन
आध्यात्मिक प्रभुता नही मात्र आराधन
भौतिक वसन्त-वैभव भी वितरित होगा
विचलित भविष्य में मानव मुखरित होगा

प्राणों की कला निकलती नैतिक बल से
बनती है कविता-किरण अमृत के जल से
पीयूष-धार करुणा से ही निकली है
सौन्दर्य-कली आँसू में सदा खिली है

कुछ अमिट अश्रुकण बुद्ध, काल-लोचन के
अव्यक्त व्यथा के शान्तिदेव, जन-मन के
आर्यों के राहुग्रस्त रवि के उद्धारक,
यज्ञान्धकार में उदित भोर के तारक

पर कर्महीन वैराग्य-मार्ग भी कुंठित
यद्यपि अशोक-परिवर्तित पथ आलोकित
गणतंत्र-चेतना में स्वतंत्रता-स्वर है
स्थिर क्रान्ति-कन्दरा में ज्योतिर्निर्झर है

मैं मात्र काव्य का युग-मनु ध्वनित हृदय में
हूँ कला-तरणि पर बैठा सृजन-प्रलय में
अंधी श्रद्धा में ज्योति-इड़ा की लेखा
वेणी-बादल-उत्प्रेरित विद्युत-रेखा

मैं प्रणय-परागमयी कविता कल्याणी
नीले नयनों में व्याप्त बाँसुरी-वाणी
मैं राग-विरागमयी विधुवदना वामा
श्यामा यौवन-ज्योत्स्ना-स्नाता अभिरामा

बिम्बाधर पर मन-मधुप-स्वप्न की क्रीड़ा
प्रस्फुटित वक्ष में सुख-सर्जन प्रिय पीड़ा
कोमल कपोल में काम-कुमुद-उद्दीपन
ज्यों सुधि-समीर में चन्द्र-बिम्ब-दल चुम्बन

सर्वाङ्ग नग्न कामिनी नयनहीना मैं
हूँ लिपि-विस्मृत विदुषी कितनी दीना मैं
केवल सुनकर ही पढ़ती हूँ मैं भाषा
भीगी-भीगी रहती मेरी जिज्ञासा

नयनों से ही तो नहीं बनी है नारी
कुछ और लिए आई अबला बेचारी
मन के भीतर प्रेमाकुल स्वत्व छिपा है
आत्मालंकृत मृदुता का तत्त्व छिपा है

भीतर ही भीतर भर जाती रस-गागर
लहराता रहता नित सपनों का सागर
फूलों की धूल उड़ा करती मृदु मन में
आँधी उठती रहती नव यौवन-वन में

अभिशापित सीता करती कठिन तपस्या
मैं हूँ स्वामी की सबसे जटिल समस्या
वेणी हूँ पुष्पित बाण फेंकनेवाली
अंधी हूँ केवल हृदय देखनेवाली

आनन्द-पीर-उन्मत्त भामिनी हूँ मैं
पावस-प्लावित शुचि शरद्-यामिनी हूँ मैं
कुसुमाच्छादित कमनीय कामिनी हूँ मैं
सुर-सिंचित स्वप्न-सरोज-स्वामिनी हूँ मैं

सचमुच मैं मेहनयी हूँ, स्नेहमयी हूँ
ऐसी सुन्दरता हूँ कि विदेहमयी हूँ
आशा-अनुरंजित भाषा भावभरी मैं
उद्दाम तरंगों में निष्काम तरी मैं

दो दीप जल रहे मेरे मानस-पट पर
झरते प्राणों पर नित्य परिमलित निर्झर
उर्वरा धरा-सी उरस्थली-हरियाली
दृग-दूर क्षितिज पर सान्ध्य उषा की लाली

अंधी हूँ, पर आँखें पहचान गई हूँ
किरणें कैसी होती हैं, जान गई हूँ
पावन पानी ही नम्र नयन की वाणी
करुणा ही मानवता की अमर कहानी

जाने कब वे नालंदा से आएँगे
ज्योत्स्ना के जल से मन को नहलाएँगे
मैं विरह-तिमिर में मिलन-माधुरी भरती
भावना-भूमि को प्रतिपल चित्रित करती

चलने की वेला चली हवा चुम्बन की
झूमीं डालियाँ सुकुसुमित यौवन-वन की
वे जा न सके चुपचाप किसी से छुप के
गुदगुदा गए गीतों को क्षण भर रुक के

पूनम की अर्ध निशा में ही वे जागे
पग-ध्वनि सुनकर मैं गई न उनके आगे
अंधी हूँ, शुभ में एक अशुभ दर्शन हूँ
मंगल वेला के लिए अमंगल तन हूँ

हूँ विधि-विधान-दण्डिता द्रवित नारी मैं
पापाग्नि-शिखा पर पंकिल फुलवारी मैं
मैं महाकाल से अति अभिशापित सुषमा
मैं प्रलय-रात्रि में भ्रमित खगी की उपमा

सुन्दर स्वामी की मैं असुन्दरी माया
कलुषित है, कलुषित, मेरी छवि की छाया
संचित सुपुण्य से वात्स्यायन-गृह आई
दिनकर-समक्ष दीपिका स्वयं सकुचाई

मेरे मंगल बन्धन में पाप छिपा है
सौभाग्य-सृजन-श्री में अभिशाप छिपा है
मैं अमृत-सिन्धु में विष-धारा बहती-सी
मैं मरु की मूर्च्छित कोयल कुछ कहती-सी

मैं द्वन्द्वमयी दो साँसों की सिहरन हूँ
मैं प्राण-पद्म में बन्द करुण क्रन्दन हूँ
मैं चन्द्र-वधू चन्द्रिकाहीन सुकुमारी
यौवन-मधुवन की मुरझाई मैं नारी

नित वह्नि-ज्वाल उठ जाती अन्तस्तल में
दामिनी कौंध उठती ज्यों बादल-दल में
कल्पना-गरल पीकर मैं झूमा करती
तप्ताकुल तन पर ज्यों कलिकाएँ झरती

जिस दिन बाला से वधू हुई जीवन में
यौवन-तरंग उठ गई अचानक मन में
लज्जित उमंग में छाई कुछ रंगीनी
भीतर ही भीतर हुई भावना भीनी

मृदु अधरों पर मुस्कान मधुर जब आई
मैं सुख-सुहाग-सज्जिता तनिक सकुचाई
फैली जब उर-उदयाचल पर अरुणाई
रुक गई द्वार पर ही मेरी तरुणाई

जिस क्षण दिनमणि ने देखे मुद्रित दृग-दल
हो उठे सुविकसित जल में ही नीलोत्पल
मै प्रेम-परागमयी कैसे कुछ कहती
बिन वोले भी मै कव तक व्याकुल रहती

छुप गई छाँह मे विह्वल वाँहे लेकर
रुक गई राह में आह किसी को देकर
भगवान ! नेत्रहीना न करो नारी को
ऐसा न दण्ड दो द्युति की फुलवारी को

तम-तरुणी में मत भरो तड़ित -छवि-छन्दा
अधे यौवन को दो मत रजनीगधा
मै स्वर्गमयी सुरभिता तिमिर-कन्या हूँ
मैं अध उर्वशी चिर विचलित वन्या हूँ

शव हूँ जीवित मै भव मे, पीरमयी हूँ
मै स्वयं अँधेरी रात अधीरमयी हूँ
मै सुख-सुहाग का भार सम्हाल न पाती
कोई क्या समझे कितनी मै अकुलाती

नभ-सी व्यापक वेदना, मृत्यु-सी काली
मै काल-क्रोध की व्यंग्यमयी मुख-लाली
मै तिमिर-गर्भ मे क्वणित विवाहित वेणी
मै हिमश्रेणी से ढँकी मृदुल मृगनयनी

अति सुखद स्वाद से पूर्ण दुखद रमणी मैं
हूँ सूर्य-चन्द्र से हीन एक अवनी मैं
पीड़ा का अनुभव नहीं हुआ शैशव मे
पर व्याथाभास मिल गया मुझे नव भव में

मेरी प्रसन्नता प्रसव-पीर-सी आती
मैं अंध नयन से सुख-शिशु को सहलाती
मेरे विराट तम मे प्रकाश छा जाता
चिर परिचित कोई रूप एक आ जाता

क्या उसी ज्योति के लिए दृगों में तम है?
कुछ दीख रहा है मुझे कि केवल भ्रम है?
मै स्वप्न सजानेवाली पीड़ित कविता
मैं भूल गई हूँ कही सुलोचन-सविता

दीपित वेणी ने जिस दिन दर्पण देखा
दिव्यता-भाल पर चमकी भाग्या रेखा
वंदी मृग-दृग में दो आँसू अकुलाए
ज्यों शयन-स्वप्न में नयन-सीप खुल जाए

नूपुर के बोल निकल आए नव पग से
झंकार-घटा उमड़ी मन-वीणा-मग से
कुसुमित कदम्ब-सा झूम उठा तन कोमल
हो गईं साँस की लहरें चंचल-चंचल

कामना-कलापी-पंख खुले घन-वन में
हो रही छन्द की वृष्टि दृष्टि के मन में
श्रृंगार-सृष्टि में हर्षोत्सव की राका
उर-अम्बर में प्रणयातुर मेघ-वलाका

वेणी अकाम-क्रीड़ा मे लीन अकेली
आँगन में सान्ध्य विपिन की गंधित बेली
बादल-हिलोर से मन-मृदंग का वादन
श्रावण-झकोर में अश्रुपूर्ण आराधन

जीवन कहता, यौवन में कितना रस है
अंधी आँखों में व्यर्थ नहीं पावस है
निशि-अन्धकार में भी आनन्द-दिवस है
जीवन में केवल रस है, रस है, रस है

तृतीय सर्ग

जव से दलपति दृग से ओझल
निष्भृंग केतकी-अन्तस्तल
विह्वल वेणी

विक्षत खँडहर-सम क्लिन्न प्राण
कंटकित श्वास में अनल-वाण
श्लथ सुधिश्रेणी

मन-शोणभद्र-तट सुमन-हीन
मृग-लय-विहीन मृदु वेणु-बीन
इन्दिरा दीन

निष्प्रभ रागारुण नयनोत्सव
श्री-सुर-अतरंगित अमृतार्णव
छवि क्षिप्र क्षीण

जामुनी यामिनी-पथ अचन्द्र
पीताभ्र अलक्तक पग अतन्द्र
रस-रहित भाव

नयनों की नीली बिजली स्थिर
मेघोत्पल-दिग्ति दृष्टि-मन्दिर
क्षत नीर-नाव

कृशकाय कपूरी विरह-शिखी
नेत्रेन्दु-नीड़ में उन्मन पिकी
नीरस रव-गति

बजते न तरुण-उर-वाद्यवृन्द
निःशब्द ऐन्द्रजालिक अलिन्द
अति मूक प्रणति

ज्यों रवि-वियोग में रात्रि-कमल
शशि-हीन चकोरी-चित्त विकल
निष्प्राण ग्राम

निर्वासित यक्ष-अभाव-ग्रस्त
ज्यों अलका की नव वधू त्रस्त
त्यों धरा-धाम

उर-अंजलि में संस्मरण-कुटज
भींगी श्वासों में ध्वनित मुरज
प्राणात्म-तान

यौवन-कदम्ब पर दृगाषाढ
भावातुर पावस-रस प्रगाढ़
श्यामल वितान

उल्लसित अश्रु-वर्षा-मंगल
झरझरित ग्राम-गीतों का जल
हिलमिल हिलोर

घन-वन में शत विद्युत-विलास
चन्द्राम्वुज-गंधित दिशाकाश
रिमझिम झकोर

रेखा - अन्तर्मुख - प्रश्नोत्तर
मन-मारुत-पथ में मेघ-लहर
पंखिल प्रवाह

उर-पिजर से सुर-उड्डीयन
स्वर-रमण-राग पर शब्द-चरण
रण-रणित राह

संकल्प-कुण्ड-हवनाग्नि ज्वलित
समिधा-साकल्य सुमंत्रोचित
कामना-ध्यान

तन्मय कुन्ती ज्यों रश्मि-स्नात
रजित सुऋद्धि से दीप्त गात
त्यों उर्ध्व प्राण

दार्शनिक द्वन्द्व-दृग-आकांक्षा
लका में ज्यों सीता-शंका
सिद्धात्म शुद्ध

ज्यों जनक-सभा में गार्गी-गति
ऋषि याज्ञवल्क्य-उत्तरापत्ति
रेखा प्रबुद्ध

आत्मावाहन में लीन हृदय
अन्तर्हित यशोधरा तन्मय
गंभीर तीर

चहुँ ओर चारु चेतनोन्नयन
उन्नीत भाव-संवेग-चयन
अशरीर चीर

श्लोकित पग-ध्वनि सुन सघन प्राण
उच्छ्वसित वायु में मलय-बाण
शतदला दृष्टि

तन्द्रिल तन पर ज्यों करस्पर्श
एकात्म-कुंज वार्ता-विमर्श
श्रृंगार-सृष्टि

पुष्पालंकृत काषाय-केश
मेघानुकूल श्वेताङ्ग-वेश
अंजनी दृगी

कंचुकी-कमल पर रत्नहार
मृदु भुज-मृणाल में अलंकार
भावना मृगी

रेखा - अन्तर्मुख - प्रश्नोत्तर
मन-मारुत-पथ में मेघ-लहर
पंखिल प्रवाह

उर-पिंजर से सुर-उड्डीयन
स्वर-रमण-राग पर शब्द-चरण
रण-रणित राह

संकल्प-कुण्ड-हवनाग्नि ज्वलित
समिधा-साकल्य सुमंत्रोचित
कामना-ध्यान

तन्मय कुन्ती ज्यों रश्मि-स्नात
रंजित सुऋद्धि से दीप्त गात
त्यों उर्ध्व प्राण

दार्शनिक द्वन्द्व-दृग-आकांक्षा
लंका मे ज्यों सीता-शंका
सिद्धात्म शुद्ध

ज्यों जनक-सभा में गार्गी-गति
ऋषि याज्ञवल्क्य-उत्तरापत्ति
रेखा प्रबुद्ध

आत्मावाहन में लीन हृदय
अन्तर्हित यशोधरा तन्मय
गंभीर तीर

चहुँ ओर चारु चेतनोन्नयन
उन्नीत भाव-संवेग-चयन
अशरीर चीर

श्लोकित पग-ध्वनि सुन सघन प्राण
उच्छ्वसित वायु में मलय-वाण
शतदला दृष्टि

तन्द्रिल तन पर ज्यों करस्पर्श
एकात्म-कुंज वार्ता-विमर्श
शृंगार-सृष्टि

पुष्पालंकृत काषाय-केश
मेघानुकूल श्वेताङ्ग-वेश
अंजनी दृगी

कंचुकी-कमल पर रत्नहार
मृदु भुज-मृणाल में अलंकार
भावना मृगी

नूपुर-शोभित स्वच्छन्द चरण
मन में उमंग ज्यों उषा-हरण
किंकिणी ध्वनित

कल कम्बु-कंठ में लय प्रलम्ब
रस-तालबद्ध नख़-शिख-नितम्ब
मुख-चन्द्र चकित

दृग वार-वार दर्पण-सम्मुख
कलिकांधर पर मधुरासव-सुख
चित्रित कपोल

कामिनी-दामिनी मणि-मंडित
सस्मित सुन्दरता स्वर्गांकित
मुकुलायु लोल

कोमलता में कुलकुल किलोल
प्राणानिल में छवि-सलिल वोल
यति मध्य मन्द

अंङ्गाग-निवेदित तन-तरंग
ज्यों स्वयं सुवादित मन-मृदंग
वन-विहग-छन्द

ऋतुचक्र-सदृश रेखाभिव्यक्ति
अनुराग-भक्ति में आत्म-शक्ति
ऋजुमय विरक्ति

सौन्दर्योज्ज्वल नव मुखमण्डल
सागर पर ज्यों पूनम-पाटल
स्थिर अनासक्ति

ज्योतिर्मय प्राणान्तर समस्त
प्रतिबिम्ब-स्कंध पर वरद हस्त
निर्मल निबन्ध

प्रस्फुटित पद्म ज्यों रेणुयुक्त
सम्पूर्ण स्नेहमय देह मुक्त
शुचि कला-गंध

चित्तोत्कर्ष आनन्द-मग्न
ज्यों प्रकृति-पुरुष-सम्मिलन-लग्न
हंसिल निवृत्ति

देवत्व-भाव-निष्णात तत्त्व
अम्बर-पथ में उड्डीन स्वत्व
तेजस प्रवृत्ति

संचित आत्मिक वल जन्मजात
प्राणों में सारस्वत-प्रभात
परिचित दिगन्त

अरुणान्तरिक्ष में रसोल्लास
रावात्मा में रमणीय रास
मन मधुवसन्त.

उत्पला क़ला-आलिका प्रखर
उद्घाटित अन्तर-स्वर पर स्वर
अनहद निनाद

आकर्षण मे अनुभूति लिप्त
ज्यों ज्ञान-गिरा से हृदय दीप्त
पाकर प्रसाद

चिन्तनारोह अवरोहमयी
गीतिका-लतामृत विधु-विजयी
मूर्च्छना मधुर

एकान्त धारणा-धरा शान्त
एकाग्र चित्त ध्यानोपरान्त
सीमा में सुर

निष्कामालिंगित मन से मन
हवनोन्मुख तनु-अनुराग-मदन
ज्वालाभिसार

नेपथ्य-शिखा घन-रण-अधीर
द्युति-काँच-किरण-पुंजित शरीर
नभ-प्रभ-प्रसार

सद्यः वाहित सुधि-सरिता-जल
मृग-स्रोतोद्वेलित अन्तस्तल
परिमलित अतल

प्रतिबिम्बित पुष्पित संधि-प्रीति
गुंजित निष्पलक प्रतीति-गीति
कलि-कोलाहल

नित अभय शोण-तट अट्टहास
हर्षोन्मत्त प्रत्येक श्वास
प्राणात्म-कथा

नयनालिंगित इंगित-भाषण
उर को उर से चिर आश्वासन
किंचित न व्यथा

नित आत्म-वरण, नित हृदय-हरण
दिक्-पंछी-सा शशि-पथ-विचरण
मंगल वन्दन

सिकता पर कल्पित कुसुम-स्वर्ग
ज्यों प्रेम-काव्य का तृप्ति-सर्ग
तन तरु चन्दन

मैं मिलनमयी विरहिणी-वेणु
कुन्तल-मग पर अथ अरुण रेणु
स्मित ऋचा-भाल

आत्मा-रति-क्रीड़ित वदन विमल
नित शोण-श्वास में गंगा-जल
दृग चन्द्र-जाल

मैं स्वत्व-सती-संगति-सुनीति
जलजाश्रित झंकृत रम्य रीति
हूँ काव्य-कला

पावन पराग कलिका-कर में
करुणाश्रु-कथा शाश्वत स्वर में
मै चिर सजला

वेणी की आत्मात्तिका अमिट
अणिमा-सुर मृदु उर-अन्तर्हित
मै मौन मुखर

आकाश-पाश-भू-भद्र भाव
शव्दाम्वुधि की नक्षत्र-नाव
ब्रह्मांशु प्रखर

दयनीय न हो दाम्पत्योत्पल
पंकेन्दु न हो मीनाक्ष विकल
कामना प्रवल

रचनात्मक घनीभूत घटना
ज्योतिर्लोचना सलिलवसना
भृंगिल पुष्कल

सामान्य सुखों से दूर दृष्टि
सौरभ-सागर पर साम-वृष्टि
क्षम पीर-तीर

सैकत-सन्दर्भ-अनिद्य प्यास
स्वाभाविक असमंजस-प्रकाश
अधिकृत सुनीर

दारुण संयोग रहस्यात्मक
ज्यों खनिज-गर्भ में स्थिर अभ्रक
संतप्त शोध

चन्द्रिल छवि में रवि-रन्ध्रनिहित
पीडा मे प्रभु-क्रीड़ा क्रन्दित
साश्चर्य वोध

लजवन्ती-लता-सदृश वेणी
समवेत ज्योति-सी सुखश्रेणी
मधुमती ऋद्धि

गदराई इच्छा बौराई
श्रेयांकुरिता सुधि-सकुचाई
ससृति-समृद्धि

संभव न अवेदन अमर सृजन
विक्षोभ-विमूर्च्छित कवि-जीवन
करुणिम कवित्व

कल्पना-सिद्धि-हिन कठिन क्लेश
अनिवार्य अमृतमय अनल-श्लेष
सीता-सतीत्व

केवल अनुरक्ति नहीं अनुभव
देती विरक्ति भाषा-कलरव
तव काव्य-कर्म

संघर्ष-स्वस्ति-संताप जटिल
अन्वेषित आत्माकाश अखिल
निरपेक्ष मर्म

निष्वृन्त कली-सी मैं कुलीन
आश्वस्त सुरभि-स्वर-समीचीन
रंगीन राग

संस्कृति-उपत्यका-उत्स-दीप्ति
स्वप्नान्तहीन तारुण्य-तृप्ति
रसपूर्ण त्याग

आलिंगन में ज्यों अनासक्ति
प्रत्यक्ष गिरा-उन्मुक्त भक्ति–
सुषमा-सी मैं

ज्यो जलद-बाहु में विद्युत-छवि
काव्यान्तर्गत कालोचित कवि––
उपमा-सी मै

शैशव से ही मै सखा-संग
ज्यों रत्न-सिन्धु-ज्योत्स्ना-तरंग
नीलम निशि में

पूर्णिमा - वृक्ष - मणि - पत्रावलि
मै नखत-मल्लिका-आभाञ्जलि
रूपक-दिशि में

नित कला-रसाम्बर धरा-ध्वनित
संगति-गति पुलकायित परिहित
उन्मेषोन्मुख

अन्तरा-शक्ति-अभिव्यक्ति अगम
माधुर्यावृत सोहम् सक्षम
यायावर सुख

क्वारी ऋतम्भरा वधू-कला
मैं स्वप्नसुन्दरी स्वत्व-तला
कल्लोल-किरण

संज्योति - काम - शृंगार - सदन
मोहक वसन्त-विम्वित जीवन
उर चिर चेतन

मैं आत्ममुखी आभा नवीन
भापा-सरिता की किरण-मीन
शोणित समीर

कवि का आवाहन करती नित
संजय-दीपित दृग आत्म-चकित
मन-स्वन अधीर

झिमि-झिमिकि-झिमिकि रिमझिमी रोर
चहुँ ओर घोर बादल अछोर
मन मोर-पंख

झर-झर्र-झरर जलधर-निर्झर
दादुर-झिंगुर-तालोत्तम स्वर
द्रुत वज्र-शंख

जाऊँ, लहराऊँ, गाऊँ मैं
पायल-प्रसून बिखराऊँ मैं
आगमन-काल

मेघात्म-प्रणोदित आशाप्रद
कह दूँ सबसे सवाद सुखद
हर्षाश्रु-ज्वाल

बादल-विभोर मारुत-मयूर
घन-स्नानमग्न तन-मन-व्जूर
पथ सलिल-मुकुर

पार्थिव प्रमोद मादन-प्रशस्त
वाणी-विनोद वासना-ग्रस्त
उल्लास प्रचुर

दीपोत्सुक श्यामल सान्ध्य सदन
ज्यों बिछुड़ी वेणी-वाह्य नयन
गोधूलि-दृष्टि

निज नीड-ओर सुधि-विहगवृन्द
जलजात्म-कोष में मन-मिलिन्द
स्थिर सुरभि-सृष्टि

मेघान्धकार में मृग-समीर
पीड़ा-विहीन तन-शान्त तीर
लोचन अनीर

दूरागत वंशी-तान तरल
अवसाद-रहित स्मित अन्तस्तल
भ्रू-भाव धीर

गृह-गृह में दीपाभा-विलास
सरिताम्बर में चल चन्द्र-हास
सस्वर किसान

सानी-पानी का कर उपाय
गृहिणी प्रसन्न दूहती गाय
किचकिच बथान

वेणीपति-सम्मुख मृदु रेखा
मन ने मन को तन्मय देखा
इंगित -भाषण

निःशब्द मौन शशि-मुख-मुद्रा–
पी रही अभय आनन्द-सुरा,
मदनीय वदन

वेणी प्रिय पग पर गई लोट
अनुभूत अकिंचन अश्रु-चोट
सिहरा शरीर

कर में कपोल-पीयूष-कलश
उत्फुल्ल कर्ण सुन यात्रा-यश
सुख-सिक्त पीर

अन्तरतर में श्वासामृत भर
आई मैं ब्रह्माणी-सी घर
खुलकर न खुली

दमकी न दामिनी-देह-शिखा
झलकी टुक तन्द्रिल स्नेह-निशा
आँखें न धुलीं

कर सकी न तन पर मन-प्रयोग
दृश्याञ्जन में भी द्युति-वियोग
दर्शन अतृप्त

वातायन पर विधु ज्यों मेघिल
गुम्फित उदग्रीव-विभा झिलमिल
उर लाज-लिप्त

सीमास्थ असीमित छद्म-छटा
ज्यों कनक किरण मे कुन्द-घटा
स्थल के जल पर

मै मन:क्षितिज-भारती मुखर
ज्योतिर्जीवन में यौवन-स्वर——
प्राणोत्पल पर

ज्यों स्वयं सत्य सपनों में स्थिर
कर्मो में मर्म-प्रणव-मन्दिर
मै प्रभा-सुधा

विधि-कला-बीज-अंकुरित ऋता
कल्याणी मैं वाणी-वनिता
नभ-मणिमुग्धा

अरुणाभिसारिका आत्ममूर्त्ति
मै इन्दु-सिन्धु-अणि-छन्द-पूर्त्ति
पिगल-प्रवाह

मै काव्य-कल्पना-शब्दकोश
अन्त.सलिला-लय-ललित घोष
ऊर्मिल अथाह

प्रेरिका प्राण-रेखा प्रवुद्ध
अप्रौढ शिल्प-विधु-वल विरुद्ध
धृतिमयी चाह

आकांक्षित काल-अमिट रचना
प्रतिभा-कल्पना किरणवसना
इंगित अगाह

निःशब्द नयन-लिपिकार सजल
मालिनी पिरोती ज्यों कलि-दल—
तन्मयता में

गति-पंख-निरंकुश कला-स्रोत
पिंजर-विहीन ज्यों मृदु कपोत
निर्भयता में

स्वप्निल रेखा रति-निशि-लज्जित
लख वेणी-दृग में ज्योत्स्नामृत
उर-अनुमानित

मन में प्रसन्न संतोष एक
कान्ता-क्रीड़ा-गति देख-देख
ज्यों जलद-तड़ित

आनन्द-वृन्त पर खिली कली
गंधाभिसारिका कृति निकली—
कल्केलि-ओर

मारुत-पथ में मधु-मनोहरण
ज्यों जलज-पत्र पर जल-चुम्बन
मृग-मन अछोर

द्युतिदर्शी रेखा स्नेहार्पित
अनुमेय श्वास भैरवी ध्वनित
तनु-तरल प्राण

अणिमादि उषा-सी वह अरुणा
व्योमांशु-मोहिनी मृदु तरुणा—
करुणा-प्रधान

हिमगिरि पर ज्यों पार्वती-प्रात
तज देता अलसित रजत रात
त्यों मुखमण्डल

शिव-सिद्धि-स्नात अन्तरालोक
निष्पक्ष अगम आत्मा अशोक
स्थिर चित्तोत्पल

आया समक्ष द्रुत बाण-यक्ष
तत्काल शान्त साधन-कक्ष
झंझा ज्यों स्थिर

झट पोंछ भाल से श्वेद-वारि
खिलखिला उठी स्वच्छन्द नारि
ज्यों प्रभा अचिर

प्रारंभ प्रथम यात्रा-विवरण
ज्यों मेघदूत में घन से मन
भू-गगन एक

ज्यों कमल नाल-शोभित मराल
बिम्बित शैलाञ्जन-नील ताल
त्यों पथ-विवेक

नालंदा-मिथिला-मधुर कथा
सुन, ध्वस्त विरह-मंजरी-व्यथा
ज्यों शिशिर-अंत

नूतन अनुभव, नव ज्ञान-धार
संकल्पपूर्ण अभिनव विचार
मुख में वसन्त

अनिवार्य अभय देशाटन फिर
संघर्ष-तरंगों पर तिर-तिर
दृढ चरण-तरी

सोद्देश्य अपेक्षित नाट्यालय
जनपद में हो गतिशील विजय-
दृश्यात्म-भरी

अवदान यही दो अब रेखे,
दृग भारत का भूतल देखे
बरसे विभूति

ढूँढूँ मैं आर्यावर्त-हृदय
वर्षों तक करूँ नित्य संचय—
यात्रानुभूति

गंभीर गिरा-रेखा यह सुन,
सत्वर प्रसन्न पुष्पाक्षर चुन—
प्राकृत बल से

उमड़ी-घुमड़ी घन-घटा घोर
कड़कड़ित तुरत तड़ितोर्मि-रोर
नव नभ-तल से

कवि-सम्मुख द्युति-दर्पण नवीन
भारती मेघ-मल्हार-लीन
उड्डीन हंस

विद्युत-वादित आकाश-वीन
आनन्द-ज्योति अन्तरावीन
शुभ्रात्म-अंश

चतुर्थ सर्ग

संवेग-सिन्धु पर स्वत्व-श्रात
निष्कुंठित अन्तर-उन्न वात
तेजस-ताण्डव-रत मन-महेश
मानस-द्रुम में निक्षेप-वेग
दिक्-दिक् दिनेश
ऋतु-रश्मि-श्लेष

संकल्प-पद्म पर प्रखर चरण
बन्धन-विहीन विकल आनन
फेनिल उमंग-उच्छ्वसित श्वास
कामना-शृंग पर कान्ति-हास
उन्मन ध्यान
स्थित विद्यमान

सांस्कृतिक प्रलय में शिल्पी मनु
चिन्तना-जाल में यौवन-तनु
विच्छुरित प्रभा प्रज्ञा-प्रेरित
ज्योतिःस्मित संसृति विश्लेपित
स्तर स्वर-वर्पित
विधि-उत्प्रेक्षित

कल्पित तरंग-यात्रा अभंग
दृग-नीर-नाभि में विष्णु-रंग
आभास्व-प्रखर वल्गा श्वासिल
अन्तराकाश में झंझानिल
चिन्तन ऊर्मिल
शुचि रुचि पंखिल

परिभ्रमण-चेतना नत उन्नत
संवलित अखण्ड मनोरथ-व्रत
गुंजरित पराक्रम-यजन-गान
अध्ययनशील अनुभव-विधान
शब्दात्म-बाण
वाणी-वितान

प्रज्ञाक्षर-शर स्वर-अर्थकोश
अनुभूत सत्य-रत आत्मबोध
संतुलित स्वेच्छा निर्बाधित
सृजनाभ सदैव नियंत्रित कृत

शिव सत्-शोधित
पथ पग-बोधित

जागा अभ्युदित कलानायक
अँगराया अन्तर-निर्णायक
नाचा गृह-ग्रीष्माकुल मयूर
मन-अनिलपंख तन से सुदूर

दृढ़ शिल्प-शूर
ज्यों चन्द्रचूड़

श्रुति-पथ पर पंकिल उपालंभ
दिशि-दिशि में कुहरित दनुज-दंभ
पर प्राण-शैल पर साम-गान
तम-अट्टहास-विम्बित विहान

नित भ्रमण-ध्यान
नाट्याभियान

इच्छाएँ विकल अरण्याणी
नित उत्प्रेरित रेखा-रानी
निस्सार नहीं पद्मिल पुकार
उद्वेगित मंथित कलाकार
जय जयति ज्वार
उच्छलित धार

मादक आशा का स्वत्व-हरण
ज्यों चन्द्रलोक पर यन्त्र-चरण
कल्पनाचक्र गति-संचालित
विश्वान्तरिक्ष-पथ अक्षांकित
नक्षत्र चकित
भावोत्स भ्रमित

अपलक दृग मे विधि-वसुन्धरा
प्लावन-प्रभ-संस्कृति-स्वयम्बरा
युग-सम्पादन की काव्याशा
व्यासोन्मुख अब विराट् भाषा
स्मित जिज्ञासा
अन्तस् प्यासा

कहते सब मुझे, प्रवण्ड बाण
निशि-ललित कला में लुप्त ज्ञान
अब द्विज-त्रिपुण्ड-द्युति-रहित भाल
रूपक-हित शंकित मन-मराल
नित जरा-ज्वाल
झक-झिझक-झाल

मैं जन-कलंक का तम-मयंक
अनुराग-कला का पाप-पंक
अम्बर-विहीन अभिनय-अनंग
तारुण्य-वायु-इत्वर तरंग
नित राग-रंग
मधु कटु प्रसंग

षोडशी-स्कंध पर कर अतृप्त
उद्दाम उरोत्सव तिमिर-लिप्त
संदीप्त वधू पर वज्रपात
कौमार्य-कली क्या अनाघ्रात ?

दंतुरित वात
संदेह - स्नात

पुण्या भार्या संदिग्ध-हीन
ज्यों जनक-सुता रवि-बिम्ब-लीन
खुल, खिल रेखा-सँग संभाषण
ज्यों श्री राधा-रुक्मिणी-मिलन

उत्फुल्ल वदन
मनमोहित मन

श्लीलालंकृत रेखा पुनीत
काषाय कला-यज्ञाग्नि-प्रीत
गोरी ग्रीवा मे गगन-माल
शशि-शलभ-रूप-राका त्रिकाल

नत उषा-भाल
लोचन विशाल

इन्दीवर पर ज्यों गिरा मुखर
रेखा वीणावादिनी प्रखर
अधरों से अमृत-फूल विखरित
कमनीय दृष्टि से किरण झरित
पग-तल पूजित
नूपुर-रञ्जित

प्राणों में सतरंगी प्रकाश
मर्मस्थल-जल पर ज्योति-हास
श्रृंगार-सरोज भ्रमर-भूषित
माधुर्य-सुरभि-रस सिन्दूरित
कामना कलित
भावना ललित

उस सुन्दरता पर मुग्ध नयन
दिव्याकर्षण से गद्गद् तन
यौवन में नित ज्योत्स्ना-हिलोर
आनन्द-सिन्धु नभ-सा अछोर
मैं छवि-विभोर
चितवन-चकोर

तरुणाङ्ग-तिरोहित तन्मयता
नेत्राङ्ङ्कित झंकृत दृष्टि-लता
मन-मुकुर-मोहिनी इन्द्राणी
कच-विकचित यथा देवयानी
मृग - मंत्राणी
वररुचि-वाणी

पुष्पक - पथ - दर्शन - परिप्रेक्षण
उत्खनन-काल निष्भृंग नयन
उर-पुरातत्त्व में सुर-प्रक्षेप
वैदिक विकास-परिवेश-लेश
सुधिविद्ध क्लेश
क्षत देव-देश

सारस्वत-पुर-प्रतिभा अपार
मानस-ऋषिपद पर स्वस्ति-धार
हिमगिरि पर हरित गंधमादन
नीचे नीलम-जल का दर्पण
अरुणाम्वुज - वन
काव्यादि-पवन

यद्यपि अलंघ्य तट-बंध श्लिष्ट,
संचित समस्त संस्कार-इष्ट
तेजोन्मुख भास्वर भट्ट बाण
दृग-अम्बर में दर्शन-वितान
वरुणात्म-यान
चिर भासमान

रंगों में नित नव रूप-रंग
प्रतिपल परिवर्तित तम-तरंग
रक्तिम संध्या ऊषा-दुकूल
बादल में ही चंचला-फूल
स्थिर केन्द्र-कूल
मन रे! न भूल

आस्था अनादि जड़हीन सत्य
एकात्म अजन्मा, सृष्टि मर्त्य
ऋतुमयी धरा रंगीन तत्त्व
अवगत अखण्ड भूमा-महत्त्व
विधि रंग-स्वत्व
गति-शिल्प-सत्व

प्रिय प्रकृति अनन्त कला-कानन
अणु-अणु में प्रभु-प्रतिभाश्रित मन
संहार-सृजन चेतना-ध्वनित
अति गूढ़ ज्ञान आर्यान्वेषित
ऋषि-ऋद्धि तपित
धृति-ज्योति गलित

तादात्म-सिद्धि सक्षम संभव
अनिवार्य स्वतः तन्द्रिल अनुभव
निष्काम योग अत्यन्त जटिल
भस्मिल विभूति ही द्युति प्रेमिल
जब मन हंसिल
जीवन पंखिल

मेरा यौवन अस्थिर अधीर
प्राणों में नश्वर-कला-पीर
नालंदा में भी लगा न मन
भाया न हृदय को गैरिक वन
मैं इत्वर घन
विद्युतमय तन

उठ सका न मुझसे धर्मग्रंथ
आकांक्षित शाब्दिक कला-पंथ
उड़ने को आकुल मुक्त विहग
अन्तर विशाल भारत-अध्वग
जगमग - जगमग
साहित्यिक जग

श्री शीलभद्र कुलपति उदार
प्रज्ञा-प्रसन्न मन निर्विकार
भ्राता उडुपति-सम उर्व्वज्ञान
ज्यों अश्वघोष-शिल्पाभ-प्राण
मानव महान
नित तत्त्व-ध्यान

भ्रातानुकरण दुस्तर अतीव
हिल गई कलाकुल दीप्ति-नींव
मैं नाट्यार्जुन, वे हवन-द्रोण
मैं शाब्दिक, वे तात्त्विक त्रिकोण
वे सिन्धु मौन
मैं मात्र शोण

मुझ-पर विदेह का अतुल स्नेह
रक्षित रागोचित गीति-गेह
उडु जनक-तुल्य जाज्वल्यमान
अरुणाभासित करुणा-निधान
गुरु ज्ञानदान–
रत, महाप्राण

नाट्याभियान-हित में प्रस्तुत
उत्कंठा-मंच यवनिकायुत
पात्रों का पूर्वाभ्यास प्रखर
संग्रहित सकल साधन सुन्दर
हर मित्र निडर
हर कर पर कर

मेरा नवयौवन रंगमंच
रसमय रस-रंजित स्वर-प्रपंच
श्वासिल अभिनय-उत्थान-पतन
स्थिति-अवलम्बित गति-उत्कर्षण
नयनों में घन
घन में गर्जन

यौवन जीवन का व्रज-वसन्त
गल्पोन्मत्त दाड़िमी दन्त
देहाङ्ग-दीप्ति मे इन्द्र-फूल
श्वासों में ऐच्छिक गंध-धूल

क्षत दृग-दुकूल
प्रिय पंथ-शूल

सुख-दुख सामासिक प्रच्छदपट
अनुप्रास-कलश-गुम्फित मन-तट
स्मृति-वास्तुकला चिरशशि-सजला
तृष्णा-तरंग तत्क्षण अवला

अमला कमला
हिम-हिय-धवला

प्रतिपल उत्कंठित कला-काम
ज्यों तड़ित-तरंगित तिमिर-ताम
संकीर्ण शिरा में रजत ज्वार
गिरि-ग्रीवा में ज्यों हेमहार

नित चन्द्र-धार
झंकार-भार

अन्तर्निनाद तारुण्य-तरल
स्वच्छन्द कंठ में शैव गरल
उत्तेजित समक्ष मम न विषम
संतुलित वासना का संयम
सौन्दर्य सुगम
निष्फल मृग-भ्रम

तिमिरासुर-सम्मुख स्वत्व-बोध
अर्चित प्राणाभा निर्विरोध
हिम-हंसोत्पल-शोभित अशेष
गंधर्वित सारस्वत प्रदेश
निष्पन्द द्वेष
मन प्रण-मृगेश

घिरता जब-जब कामान्धकार
खुल जाते अन्तःकरण-द्वार
सौन्दर्य-प्रलय-मनु निश्शंकित—
करता ज्योतिर्वीणा झंकृत
झरता संस्कृत—
संगीतामृत

तम मे प्रकाश का शक्तिपुज
कोमलता में कवि-कलाकुंज
कोलाहल में भी शान्ति-किरण
संघर्षो में स्वर-शब्द-वरण
उर अलंकरण
सुर - संवेदन

रण में ज्यों जन-करुणा-निवास
क्रन्दित प्रहार से दृगाकाश
सर्वानुभूति रस-रत्नाकर
पीयूषी पृथ्वी छवि-नागर
कवि-कर्म प्रखर
शब्दों में स्वर

अज्ञानी प्रतिभा अर्थहीन
ज्यों अपढ यौवना ज्योति-क्षीण
विदुषी रस-रहित नही कोमल
सौरभमय सुन्दर प्रेमोत्पल
गति मन्द चपल
'शासित पग-तल

उस दिन अति चिन्तित रुग्न बाण
आसनासीन जनकवि इशान
योजनाबद्ध यात्रा-विमर्श
अंतिम निर्णय सम्बल-समर्थ
अ ज्ञे य ह र्ष
लख अतुल अर्थ

वेणी को विछुड़न-रसाभास
वंदी लोचन में घनाकाश
अव्यक्त आह में नमित नाद
अवगुंठित असमंजस-विषाद
प्रभु पू ज्य पा द
यह नि र्वि वा द

अधाक्षी कम्पित कमलकली
पंखुड़ी प्राण की जली-जली
संगय-सुगंध-गति शिथिल-शिथिल
अनुमेय सान्ध्य आभा झिलमिल
तम-पथ फेनिल
निशि-दिशि मर्पिल

उत्कल-उचाट-सा मु ख म ण्ड ल
गंभीर पी र - पा ता ल - अ त ल
पुष्करावर्त अम्वुद नेत्रित
संभाव्य सफलता लक्ष्याङ्कित—
वि र हो त्पी ड़ि त
अकलुष क्रीड़ित

प्रेरणा-पार्श्व में मनस्तत्त्व
स्थित प्रज्ञ प्रतनु-प्रालेय स्वत्व
हृदयाकुल स्वन निःशब्द शान्त
आत्मोदित शोधित प्राण-प्रान्त
मृत-भस्म भ्रान्त
ज्यों तन-तमान्त

चेतन-रहस्य-रति गोपनीय
मार्मिक माया-ध्वनि मानवीय
दाम्पत्य-कला शिव-गंध-स्नात
उदयाचल पर मंगल प्रभात
मन-स्वर्ण गात
ज ल जा त - वा त

अनभिज्ञ वाण में नव विकास
श्री-स्नेह-निरूपित स्वराकाश
आ क्षे प ही न इ च्छा - अ गी त
विधि-विष्णु-वीथि पर विरह-नीति
जय ज्वलन-जीत
अक्षय प्रतीति

रोको रेखे ! दार्शनिक वृष्टि
मृदुता से होती कला-सृष्टि
वेणी उर में भी विभा-पीर
नयनाश्रु-सिन्धु-सीमा अतीर
अति नील नीर
सौ र भ - श री र

मेघिल गगनाङ्गन अरुण-अरुण
उड्डीन विहंगम तरुण-तरुण
तिमिराभासित दिशि, करुण-करुण संध्यानिल

कर संचित स्वर्णाभा समस्त
अस्ताचल पर रवि अर्द्ध अस्त
काषाय किरण निस्तब्ध व्यस्त, पथ झिलमिल

तरु-श्रेणी-क्षिति पर रक्त-राग
शंकर-तप-हित ज्यों सती-त्याग
क्रमशः प्रगाढ़ निशि-तम-तड़ाग, मग निष्प्रभ

लिख नीलपत्र पर ज्योति-श्लोक
हरता अदृश्य आनन्द शोक
वन-वन में नव संवेग-झोंक, जगमग नभ

सद्यः पूर्वाम्बर सरस-सरस
निकला निशीथ का काव्य-कलश
फैला ज्योत्स्ना-संगीत अलस, दिग्-दिग् श्री

लहराया रूप-रहस्याचल
उत्फुल्ल कुमुद-दृगदल चंचल
लख चारू चन्द्र, निश्छल निर्मल जय-यात्री

पूर्णेन्दु-प्रभा-सा रूप-कलश
सौन्दर्य-सलिल छलकाता-सा
साकेत-स्वर्ग - शीतलता में
मुख-मणि का दीप जलाता-सा

अल्पित कर में काषाय कली
ऋजु-अगुरुगंध बिखरती-सी
वैवस्वत संस्कृति श्वासों में
वासन्ती ध्रुपद सुनाती-सी

कुंचित कुन्तल पर कुसुम-गुच्छ
अलि का आवाहन करता-सा
नूपुरित पद्म-पग-झंकृति से
रागानुराग-स्वर झरता-सा

किंकिणित मेखलावृत मृदु कटि
रुनझुनित रश्मि-रस जयनी-सी
संयत ग्रीवा पर इन्द्र-दृष्टि
अभिनन्दित प्रथम प्रणयिनी-सी

सर्वस्व त्याग कर भ्राता-संग
प्रासाद-मार्ग से जाता-सा—
देखा वेणी ने लक्ष्मण को
सागर-समान लहराता-सा

वातायन पर नव नम्र वधू
पति-चरणचिह्न-लिपि पढ़ती-सी
मंगल भविष्य की मिलन-मूर्त्ति
प्रस्तरावरण में गढ़ती-सी

निर्वाक् स्वामिनी अश्रु-सुधा
भीतर ही भीतर पीती-सी
उर की गगरी सरयू-तट पर
रे रीती - रीती - रीती - सी

मेरी भी कुछ ऐसी ही स्थिति
रेखे ! मैं भी अकुलाती-सी
उनके जाने के पहले ही
बुझती-बुझती मैं बाती-सी

वे कला-कर्म-रामाभ-संग
आत्मातुर भौतिक भ्रमण-हेतु
निर्मित होगा ऋत नेत्रों में
बिम्बाम्बर का सुरचाप-सेतु

रवि-रजनी सीता-प्रभा-सदृश
विचरेगी तू गति-छाया सी
एकाकी मैं स्मृति-च्युतिवसना
सिसकूँगी संस्थित माया-सी

रोगान्ध नयन ऋतु-संगोपित,
प्रिय-पथ पहचान गई हूँ मैं
रंगों की रमण-तरंगों पर
यौवन को जान गई हूँ मैं

अंधाक्षि-कालिमा-कैकेयी
प्रेरणा-ज्योति बिखराएगी
व्योमिल वेदना-विकलता में
घन-तन-संगम पर गाएगी

विद्युत-प्रसून की मालाएँ
गूँथूँगी सजल प्रतीक्षा की
आई है मेरे जीवन में
सखि, पावस-घड़ी परीक्षा की

हर्षित हो उनका उन्नत मन
छन्दायित गति-छवि गढ़ता-सा
काव्यार्चित हो कल्पनापुञ्ज
चल चन्द्र-शृंग पर चढ़ता-सा

प्राक्तन पलाश-प्रतिभारुण दृग
धारान्ती यश-परिधान बने
भावों के शब्द-प्रसूत राग
शास्त्रांशुक-स्वप्न-वितान बने

काव्यर्षि बृहस्पति विभापूर्ण
चमकें शिव-सिद्ध हिमालय-सा
भाषा-स्थापत्य प्रखरतर हो
युग-ब्रह्म-रचित देवालय-सा

श्रुति-सौमनस्य दृग से देखूँ
सुर-कीर्त्ति-स्तंभ कालोत्सव का
पूजे पग कलासक्त मानव
निर्वैर दृष्टि से चिर नव का

मैं बन न सकी कविता कोमल
चितवन में फूल खिलाती-सी
प्रेमाश्रु-पंखुड़ी पर भौमिक
सौरभ की सुधा पिलाती-सी

मैं बन न सकी कविता चंचल
उर्वशी-सदृश अँगराती-सी
फेनांशुक - रूप - तरंगों पर
नयनों मे नयन मिलाती-सी

मैं बन न सकी कविता निर्मल
यौवन-ज्योत्स्ना फैलाती-सी
कामान्ध-सिन्धु पर चन्द्रार्पित
चुम्बन-तरंग बिखराती-सी

मैं बन न सकी कविता उज्ज्वल
जयवर्द्धित ज्योति जलाती-सी
नित वनिल अनिल में काव्य-कान्ति
तारक-पट से छिटकाती-सी

मैं बन न सकी कविता निश्छल
स्मित मलयमंत्र में गाती-सी
उड्डीन हंस-शशि-पंखों पर
तारस्वर-ताल सुनाती-सी

मैं बन न सकी कविता दुर्बल
वासना-सुरा छलकाती-सी
बुन इन्द्रजाल तम-लहरों का,
उत्तेजित गति में आती-सी

मैं बनी एक कविता कज्जल
घन-घटा-छटा दिखलाती-सी
प्रतिपल नयनों के नभ-पट पर
विद्युत के चित्र बनाती-सी

मैं बनी एक कविता सलज्ज
श्यामलता में सकुचाती-सी
बादलावरण में वृत्तहीन
शशिवर्णा छवि मुस्काती-सी

मैं बनी एक कविता अधीर
पीड़ा में पुण्य सजाती-सी
करुणामृत-मौक्तिकमाया में
मन को सदैव नहलाती-सी

रेखे ! तू मुखर प्रवीणा-सी
मैं मूक बाँसुरी-भाषा हूँ
तू सृजनमयी अभिलाषा है
मैं अंधी उज्ज्वल आशा हूँ

नारी हूँ, विरह न सह सकती
अंधी हूँ, फिर भी नारी हूँ
कुछ भी हूँ नहीं परन्तु एक
यौवन की जीवित क्यारी हूँ

कुछ अश्रुविन्दु सम्बल समस्त
कुछ प्रणय-फूल ही प्राणकोश
सखि, बता आज तू ही मुझको,
इन नयनों का तो नहीं दोष ?

सच कहती हूँ, अधरोत्सव में
थीं खिली अमित ऋतु-कलिकाएँ
जब-जब अँगराई सुमन-वायु
हिल गई हृदय की लतिकाएँ

सखि, असहनीय अंधी-तृष्णा
नारी हूँ, नेह लगाती हूँ
छूकर देवोत्तम पग पावन
पूजा के पुष्प चढ़ाती हूँ

सस्वर प्रणाम-वंचिता हाय,
किनसे संलाप करूँगी मैं ?
किनका स्नेहोत्तर सुन-सुन कर
नित निद्रित पीर हरूँगी मैं ?

मैं सुख-स्नाता भार्या प्रसन्न
शरदुन्मुख मुकुलित कमला-सी
यौवन-जल पर तैरती हुई
मंजुल मरालिका मृदुला-सी

विरहिणी यक्षिणी अलका में
रह-रह कर नित अकुलाएगी
क्या घटा रामगिरि से फिर भी
आषाढ़-पंख पर आएगी ?

हे महाकाल ! संभव यह क्या ?
वेणी में इतनी क्षमता है ?
प्रत्येक पुरुष को क्या अपनी
पत्नी से वैसी ममता है ?

मै प्रीतिकूट की अंध वधू
मन-ही-मन क्रन्दन करती हूँ
विश्वातुल विरह-वीथिका में
चुम्बित अतृप्ति-घट भरती हूँ

वेणी-विलाप-विह्वला विभा
शोधने लगी संघातों को
देखा दूरस्थ द्रवित दिशि में
रोती-चिल्लाती रातों को

उग आए उर-पत्रों पर द्रुत
कृष्णाश्रु-काव्य के नयनाक्षर
नारीत्व-कन्दरा से निकला
भीतर ही भीतर निर्झर-स्वर

चूमने लगी वह भव्य भाल
तत्क्षण आलिंगन करती-सी
वर्तिका स्नेह की जली एक
अव्यक्त पीर-तम हरती-सी

छू लिया तप्त विरहात्मा को
शाश्वत संगीत-कुमारी ने
लिख दिया प्राण पर प्रथम छन्द
करुणामयि अंधी नारी ने

गंधित गति का ज्यों महत् मिलन
आकुल रहस्य-उच्छ्वासों में
छाया से छाया लिपट गई
चिर परिचित चन्द्रिल पाशों में

मन से मन मिलता रहे सदा
इतनी ही कह कर जाता हूँ
हे जन्मभूमि! यात्रा-वेला
तेरी ही धूल लगाता हूँ

वर दे कि बाण के प्राणों में
भारत का चित्र उतर आए
भारती किसी दिन साँसों में
अमरत्व-रागिनी भर पाए

अपराध क्षमा करना, मेरा
हे प्रीतिकूट! मैं चलता हूँ
तेरा ही पुत्र अभागा मैं
जो कला-ज्योति में जलता हूँ

दे आशीर्वाद मुझे जननी!
जाने फिर लौटूँ या कि नहीं
मर भी जाऊँ तो कह उठना
था बाण किसी दिन यहीं कहीं

भूलना मुझे मत शोणभद्र!
लिख देना नाम किनारों पर
यदि कर न सकूँ मैं हस्ताक्षर
नीरव निशीथ के तारों पर

रस-सिक्त दृष्टि से देख-देख
क्षण में ही सब कुछ कहती-सी—
आई वह उषा लिए गृह तक
निज दृग-तरंग पर बहती-सी

कह गए कि बारह वर्षों पर
होगा प्राणों का पुनर्मिलन
प्रियतमे ! स्मरण करना मेरा
जब-जब उमड़े अम्बर में घन

षष्ठ सर्ग

माण्डवी-आकाश में ज्यों उर्मिला की रात
कमल-कम्पित गात में नित विकल दिव्याघात
अश्रुनिपात

दृष्टि की अंधी किरण जब देखती उस पार
गूँजती सम्पृक्त नीरव मंत्र की झंकार
बारम्बार

अथिर, अनलासीन, आहत पूर्णिमा के प्राण, —
तनु-तरंगायित तटी पर लिखा करते गान
कुछ अनजान

पीत शशि-रस पान कर जब उषा भोर-विभोर—
फेंक देती शोण-मन पर घन-अजिन-छवि-छोर
भानु-झकोर—

तम-कलभ-क्रीड़ित नयन तव तैर कर चुपचाप
आत्म-तट के निकट करते शोणिमा-संलाप
अपने आप

प्रणय-गान्धारी विकलता काँपती असहाय
अंध मृग शर-विद्ध ज्यों गिरि-शिखर पर निरुपाय
हिय में हाय

प्रिय प्रवासी की उदासी व्याप्त चारों ओर
मरुस्थल में छटपटाता ज्यों अवन से मोर
तप्त हिलोर

लालसा के लता-गृह में विरह-वह्नि-विलास
दृग-भुजा-आबद्ध तारों से भरा आकाश
स्वप्न-समास

चन्द्र-किरणों से चुई जल-यूथिका की गंध
सूँघती मन-घ्राण-वल से नयन-भ्रमरी अंध
उर्ध्व प्रबंध

मातृहीना बालिका-सी मधुरता की पीर—
चूस आशा-स्तन अकेली पी रही ज्यों क्षीर,
हृदय अधीर

पदाघात प्रसून-शोभित काम-वन्ध्या दृष्टि
मन्द मंजुल सुरभि-सिंचित विकल वंजुल-सृष्टि
सुधि की वृष्टि

रूप-वसुमति ऋतु-निरादृत, वधिर वायु-प्रवाह
अमिट उर की भित्तियों पर प्राण-चित्रित चाह
रंग अथाह

श्वास में स्रूवक-पावक-स्वर-प्रगल्भ-मरीचि
गीति-गर्जित उदधि-गृह में कम्बु-घोषित वीचि
पद्म-प्रतीचि

पीर के अव्यक्त वारिद व्योमहीन अशान्त
मिलन-वाष्पित विरह जीवन-जय-निहित अश्रान्त
कुन्दन-कान्त

नयन की मुद्रिका में चिर तिमिर-ऋषि-दुर्वास
शाप-सैकत-तप्त पथ में प्रखर पावन प्यास
दिक्-परिहास

गाधिसुत से दुखित शैव्या-सी अवाक् उमंग
भीष्म-मन के समर में सुधि-स्वर-प्रतिज्ञा-भंग
अचल अनंग

गीत-गोपा प्रीत-पुलकित स्वप्न में स्वच्छन्द
धरा पर ज्यों लोटता नभ-नीलिमा-आनन्द
आँखें बन्द

अतल तल में सलिल-ज्वाला का यथा आवेश
काँप उठता रति-प्रलय से स्फटिक प्राण-प्रदेश
कुसुमित क्लेश

प्रणय-पलकों पर प्रतीक्षित विनय-व्रज-सुविलास
रूप-राका केलि-कुंजों में अलस वातास
हिम-सा हास

तरल साँसों मे वसन्ती मदन-मन्द्र मृदंग
छू रही शशि-छद्म-छवि को अमल अंध तरंग
विकल विहंग

व्याप्त तन पर चन्द्रिकामय निशि-प्रसन्न दुकूल
चू रहे मन पर रसीली रश्मि के हिम-फूल
सुरभित शूल

उड़ रही लावण्य-लोचन में मलय की धूल
हो गई दिग्भ्रान्त सुधि में प्राण से कुछ भूल
भापा स्थूल

वाण-वामा की विविध ऋतुचक्र-चुम्बित देह
चन्द्र-रवि-नक्षत्र को ज्यों भूमि से चिर स्नेह
बिम्बित गेह

मेघ मे उड़ती बलाका-पवित ज्यों अनुकान्त
प्राण से मन भिन्न दिशि में रचित छन्द अशान्त
तप अभ्रान्त

नीद की भूखी नदी में नीर-राग-निनाल
सान्ध्य क्षिति पर शर्वरी-कर में शशाक-मराल
ज्योत्स्ना-जाल

कुमुद-पथ पर अदिति-उर्वशि का रजत अभिसार
भूमि से आकाश तक झंकार ही झंकार
स्वर गान्धार

मधुरता के प्रणव-मन मे अंध वेणी लीन
हृदय-सीकर में अकिंचन प्राण सीमाहीन
वामन दीन

दिव्य अन्तर्दृष्टि - अध्वग नापता उन्माद
एक रेखा पर अनिद्रित हर्ष और विषाद
गति-संवाद

टाँकती वाराणसी-वनिता यथा पट-फूल
ललित वेणी चुन रही तन्मय गुलावी शूल
मन-अनुकूल

तिमिर-युवती ज्यों विछाती नखत-शय्या श्वेत
सज रही प्रेमिल विदग्धा नील विरह-निकेत
भाव-समेत

कण्व-कन्या की सखी ज्यों नही रति-अज्ञात
देखती गंभीर रेखा नित हृदय की रात,
सुनती बात

आँसुओं को गूँथ लेता अत्तिका-अनुराग
मौन क्रन्दन में तिरोहित प्राण-अग्नि-पराग
ज्यों विष-झाग

बिम्ब में प्रतिबिम्ब-सी रेखा अधीर-अधीर
एक अपनी, एक उसकी, एक उनकी पीर
पिच्छिल तीर

सिन्धु मे ज्यों किरण-शर से जलद-जन्म-प्रदान
लग रहे कोमल वदन पर वेदना के वाण
अन्तर म्लान

पढ़ रही रेखा विग्रह-विन्यास का इतिहास
अतुल करुणा मे विपुल वैराग्य-द्युति का वास
स्वर्णाभास

दार्शनिक अनुभाव मे ज्यों सत्य का परिणाम
चित्त में स्थिर अचिर यौवन की लहर उद्दाम
प्रेम अकाम

शोणभद्रा बावरी वेणी सघन शशि-मूर्त्ति
छन्द की अभिव्यंजना-सी बन्द छवि की पूर्त्ति
तन्द्रिल स्फूर्त्ति

कभी गृह में, कभी आँगन में सुजन-संलाप
शयन-वेला नयन मे सुधिमालिका-संताप
शिव-सुरचाप

सुमन से निकले पवन में प्राण-गुंजन-गान
कामना-शुक-सारिका का श्वास में आह्वान
दिशि-दिशि ध्यान

घोर घन में मन-पपीहा-मंत्र बन्धन-मुक्त
व्योम के विधु-ग्रंथ-ज्योत्स्ना-पृष्ठ विद्युतयुक्त
बंकिम सूक्ति

हिला देती हाथ से पीयूष-द्रुम की डाल
चूम लेती अधर से मैं चन्द्रमा का गाल
गूँथती मधुयामिनी में तारकों का हार
स्वयं आकुल करों से करती उषा-श्रृंगार

काव्य की अभिसारिका-सी मैं सजाती देह
तूलिका से चमत्कृत होते अजन्ता-गेह
मल्लिका की कली से रचती मधुरता-श्लोक
देखती पिक-पुष्प-सज्जित पंक्तिबद्ध अशोक

शोण-धारा पर बहाती दीपश्रेणी स्वर्ण
ढूँढ़ती जल-बिम्ब में झिलमिल विभा का वर्ण
किन्तु हे ब्रह्मे ! हुई उस जन्म में क्या भूल
चुभ गए मेरे नयन में क्यों तिमिर के शूल ?

ले गया हर कर दशानन दृष्टि-सीता हाय,
पढ़ न पाईं दृगी नव दाम्पत्य का अध्याय
वयःसंधि-वसन्त में ही हुआ काल-प्रहार
बुझ गया तम के सलिल से ज्योति का अंगार

अंध मीनाक्षी स्थगित कर सकी नहीं सुयज्ञ
आत्मजा कैसे कहे ज्ञानी जनक थे अज्ञ
मोह के उस मूल्य का अंकन करेगा कौन ?
कामना के अतल तल में मलय-माया मौन

उस पुरुष की वधू मैं, जिसमें प्रखर साहित्य
उदित जिसके उर-गगन में कला का आदित्य
अंध धरती रोक पाई नहीं रवि की राह
मैं पकड़ना चाहती हूँ व्यर्थ उनकी बाँह

किन्तु मैं कैसे कहूँ, मुझ से प्रभाकर भिन्न
प्रेमगंधा पद्मिनी से वे न किंचित खिन्न
स्वत्व-पत्रों पर किरण-पारद-प्रणय-रसबिन्दु
दिव्य ऋषि-संतान मेरे स्वामि करुणा-सिन्धु

अधर पर अस्तित्व रख, वे गए गृह से दूर
कला-स्रष्टा का हृदय होता नहीं है क्रूर
स्कंध पर मुख-भार धर जब की उन्होंने बात
रुक गया मन-कन्दरा में आत्म-अश्रु-प्रपात

अँटे उनकी अक्षि मे सुविशाल भारतवर्ष
कल्पना-यात्री करे दिक्काल से संघर्ष
मृदु मनीषी के चरण पर रखूँ मैं उर-फूल
छीट दूँ उनकी सफलता पर सुगंधित धूल

व्यर्थ रेखा रुक गई, मुझसे हुई यह चूक
कला की अभियान-वेला रह गई मैं मूक
हुई होगी प्राणपति को स्थगन से कुछ ग्लानि
मात्र मेरे लिए उनसे भिन्न वीणापाणि

आज किस मुख से करूँ प्रस्थान का अनुरोध
व्यक्त कैसे कर सकूँगी सजल भावुक बोध
मैं हृदय, वह बुद्धि, पर सम्मिलित नारी-भाव
भक्ति को ज्यों ज्ञान-ज्योतिर्गनि से न दुराव

किन्तु रेखा-राग में वैराग्य का आभास
मिट रही प्रतिदिन कदाचित रज-कला की प्यास
हो रही अचपल, सफल कलकंठ की झंकार
मौन मन की भारती में बोधिसत्वाधार

पूज्य देवर-संग रेखा का गहन संलाप
आत्म-सत्ता-ग्राह्यता से स्वत्व को संताप
गूढ़ दर्शन-तर्क का मैं सुन न पाई नाद
चाहता नारी-हृदय कुछ हर्ष और विषाद

प्रेम क्यों ढोए अरसता-अग्नि का संभार
शुभ्र मन तो माँगता चिर स्नेह का अधिकार
फूल पर कुछ ओस हो, कुछ किरण, कुछ गुंजार
मधुर नारी चाहती केवल किसी का प्यार

स्निग्ध करुणा, दया, ममता, माधुरी, कल्याण
इन्हीं सात्विक गुणों से नारीत्व की पहचान
सर्वगुण-सम्पन्न रेखा और अधिक प्रदीप्त
त्याग की प्रति मूर्त्ति ऐन्द्रिक विषय से निर्लिप्त

सरस प्रतिभा में दिवस के तेज का तारुण्य
प्राण में अति दिव्यता का धर्मचक्रित शून्य
देख पाती यदि किसी दिन बाह्य रूप उदार
झूम उठता नेत्र-रंजित दृष्टि-पारावार

आत्म-वैदिक बालिका में अव तथागत-ध्येय
सूक्ष्मता-गति-श्वास का विश्वास कुछ आग्नेय
विविध वाणी-सत्य का वह सरल सामंजस्य
शोण की जल-पार्वती निर्बन्ध नम्र नमस्य

सरस प्रतिभा में दिवस के तेज का तारुण्य
प्राण में अति दिव्यता का धर्मचक्रित शून्य
देख पाती यदि किसी दिन वाह्य रूप उदार
झूम उठता नेत्र-रंजित दृष्टि-पारावार

आत्म-वैदिक वालिका में अब तथागत-ध्येय
सूक्ष्मता-गति-श्वास का विश्वास कुछ आग्नेय
विविध वाणी-सत्य का वह सरल सामंजस्य
शोण की जल-पार्वती निर्बन्ध नम्र नमस्य

चाटती ज्यों कामधेनु सुपीड़िता मृगदेह
दिव्य रेखा दे रही नित सुप्त दृग को स्नेह
सुस्मिता वेणी सुना देती अतल-संगीत*
शुभ्र चन्द्र-कपोल पर झरझरा उठती प्रीत

और, तव वह मानवी कुछ सोचती चुपचाप
ज्यों प्रकृति का पुरुष से गंभीर आत्मालाप
रस-विवेचन में हृदय मकरन्द से अनुरक्त
प्राप्त करता ज्यों अमर आनन्द प्रभु का भक्त

---

*

कमल-लोचन को किरण दो
गंध-अंतर्मुखी मन दो !

अमित अन्तर के प्रखर स्वर—
वने सुर-संलाप निर्झर

आत्म-गति के निलय लय में
ज्योति-जय का जागरण दो !

चेतना भींगे न घन में
मन न केवल रहे तन मे

प्यास के आकाश को अव
अन्तरा का आवरण दो !

अश्रु मे आनन्द फूले
श्वास पर विश्वास झूले

राग-रंजित तम-हरण कर
चरण में पावन शरण दो !

तंत्र से अध्यातम ज्यों अति श्रेष्ठ, अति अनमोल
मनुज के उर-कोष मे ओझल अमृत के बोल
शास्त्र से ज्यों काव्य की करुणा अधिक सुकुमार
बुद्धि से प्रायः सबल अन्तर-किरण उपहार

हृदय-मृदुता-मेदिनी से रहित उष्मा-ज्ञान-
अश्रु-इच्छा का कभी कर सका क्या कल्याण ?
मोक्ष की परितृप्ति में भी कर्म विपुल प्रभाव
क्षितिज पर ज्यों अवनि-अम्बर का अदृश्य लगाव

चक्रवात-प्रभात में ज्यों द्वीप-तट जलयान—
देखता चुपचाप गर्जित उर्मि का अभिमान,
वेदना में बुद्धि की झकझोर से उर मूक
तत्त्वदर्शी दृष्टि में सप्राण कोयल-कूक

शब्दगंधा शर्वरी में अर्थ-ज्योत्स्नानन्द
झर रहे आकाश से अविरल कुसुम के छन्द
गीति-सुधि पर बह रही रेखा अभी सविलास
रूप मे कुछ रम्यता, कलकंठ में कुछ प्यास

शोण-सिकता-राशि में ही मैं रहूँ अज्ञात
नहीं समझे कहीं कोई प्रीतिकूटी बात
चुप रहे आकाश-सा, अंधी कथा अनजान
उठ न पाए किसी से स्मृति-काल का चट्टान

सुने तट की लहर केवल मौन वार्त्तालाप
करे पावन पग-प्रतीक्षा दृग-अहल्या-शाप
प्रीति-गिरि से यक्ष कोई दे अमर संदेश,—
करे धारण गगन-पथ में बादलों का वेश

अश्रु का संवेग ज्योंहीं रुका एकाएक
किया रेखा ने छलकती पीर का अभिषेक
दो क्षणों के लिए करुणा और अरुणा शान्त
पुनः भामह-अर्थ-संगम पर प्रखर उदयान्त

तभी उस निस्तब्धता में उदित उडुपति धीर
उड़ा प्राणाकाश में शुचि चन्द्रिका का चीर
व्यथित मन की मृत्तिका पर धैर्य का अवदान,—
आ रहा होगा सुवासिनि! अब हमारा बाण

सत्य-शिव-सुन्दर-त्रिवेणी में अमृत-झंकार
काव्य ज्यों तीनों गुणों से सरस एकाकार
दुख-दिवस में ज्यों सुखद होती स्वजन की बात
कट गई उस दिन किसी की एक रोती रात

सप्तम सर्ग

तिमिर में नूतन किरण कैसे भरूँ
कहो मेरे प्राण, अब मैं क्या करूँ?
आज मालवभूमि पर मैं मौन हूँ
कह नहीं सकता कि मैं अब कौन हूँ

बरस बीते सरस रस-संघर्ष में
मैं विचरता रहा भारतवर्ष मे
नाट्य-सुरसरि मगध की बहती रही
कला-धारा गति-कथा कहती रही

शक्ति संचित हुई घूर्णाघात में
दीप जलता रहा झंझावात में
स्कंध पर ढोता चला तूफान को
प्राण से छूता रहा अभियान को

चाँद लेकर सूर्य निकला राह में
बह गए तारे समस्त, प्रवाह में
सिद्धियाँ जयमाल पहनाती रही
आँधियाँ आती रहीं, जाती रही

उच्छलित आवेग तो रुकता नहीं
कर्म-यौवन कभी भी झुकता नहीं
पथिक चलता रहा दिन में, रात में—
सिंह-संध्या, रुद्र व्याघ्र-प्रभात में

शत्रु-पथ में स्वत्व-ध्वज गड़ते रहे
पत्थरों के फूल भी झरते रहे
विघ्न-बाधा में प्रगति का वास है
अवनि पर ही अग्नि का आकाश है

हिमशिखर से भी धुआँती आग रे
प्राण को दुख से न कभी विराग रे
बाण, मत कर लक्ष्य का परि-त्याग रे
छाँह में मत छिपा आग-पराग रे

नाट्यशाला में कहा तू ने सदा,—
कला की कामिनी तो चिर उज्ज्वला
सत्य ओझल, प्रकृति के सौन्दर्य में
शिव सदा ही व्याप्त शुचि माधुर्य में

पूर्ण अभिनय आत्म की अभिव्यक्ति है
व्यंजना में सर्जना की सृष्टि है
कला ही ऋषि भरत की भू-भक्ति है
रसोत्सव-अनुरक्ति दिव्य विरक्ति है

नाट्य में सुर-असुर की उर-चेतना
विकल-अविकल विमल वाणी-वंदना
सिन्धु-मंथन का अमृतमय संतुलन
भिन्नता में एकता का जागरण

प्राण-मुद्रा-लास भाव-प्रकाश रे
नाट्य, चिन्तन का सुललित विकास रे
रस-शिखर पर तत्त्वमय हिम-हास रे
प्रकृति-गुण-अवगुण-स्वरूप-विलास रे

अन्यतम शास्त्रज्ञ-उक्ति अकाट्य है—
सर्वसंगम कृति कला का नाट्य है
भास-कालीदास की रस-घोषणा,—
नाट्य मानव-विश्व की अभिव्यंजना

रगमंच विराटतम ब्रह्माण्ड है
काल-अभिनेता असीम प्रकाण्ड है
चर-अचर में व्याप्त अभिनय-चेतना
स्वतः संचालित रचित उद्भावना

प्रकृति-पौरुष-केलि अणु-परमाणु में
एक ही उच्छ्वास भू, शशि, भानु में
एक ही स्वर में सृजन, संहार भी
स्निग्ध शीतलता, ज्वलित अंगार भी

अवतरण भी एक शून्य अरूप का
प्यास में आभास ओझल धूप का
ज्ञेय वह अज्ञेय आत्म अथाह में
चेतना चिर मुखर काल-प्रवाह में

भूमि पर ही व्योम का दिव्यावरण
प्रखर स्वर पर अमर सत्ता का चरण
आत्म-आभा-चक्र-चुम्बित सृष्टि रे
ब्रह्म-अभिनय-रत सकल शिव-दृष्टि रे

विष्णु-उत्कंठा समस्त दिगन्त में
एक सूक्ष्मालोक व्याप्त अनन्त में
प्रकृति में नाटक चिरन्तन हो रहा
अमर नश्वर-भार प्रतिपल ढो रहा

सत्य की उपलब्धि अनुभव-सिन्धु में
दृश्य बिम्बित दृग-विचुम्बित बिन्दु में
महाश्वेता सरस्वती समस्त रे
उदय में ही मलय-गंधित अस्त रे

व्याधि-वेला वह वधू की बाँह थी
तप्त मरु में नम्र तरु की छाँह थी
जागती वह रही ज्वर के ज्वार में
सुरभि उठने लगी कुछ, अंगार में

चन्द्रिका मुरझा गई रवि-ताप से
ढल गई उर्वशी दृग-अभिशाप से
नर्मदा में नर्त्तकी वह वह गई
क्षोभ की छाया कथा कुछ कह गई

किन्तु वह डूबी न चंचल धार में
आयु थी उस वीन की झंकार में
नाव पर प्रिय मित्र कवि ईशान था
तैरने में वह तड़ित-तूफान था

स्कंध पर लादा उसे जल-स्रोत में
तिरा स्वस्थ शरीर तारक-जोत में
फँस गए चारों चरण जब पंक में
उगा पिंग मयंक निशि के अंक में

हिरण-सी कुछ नाट्य-तरुणी आ गई
माधवी अकुला गई, सकुचा गई
झुक गई मेरे निकट वह दामिनी
जल गई गुंजित किरण से यामिनी

और, तब से माधवी निस्पन्द थी
सुरभि अन्तर-कोष में ही बंद थी
चुप रही अमरावती में उर्वशी
कामना-कंचुकी इतनी थी कसी

अवन्ती में फिर घटा घिरने लगी
इन्द्र-नौका नयन में तिरने लगी
फूल उड़ने लगे आधी रात में
बीन बजने लगी उसकी बात में

श्वास की शिप्रा तरंगित हो गई
वेणु-वन में माधवी फिर सो गई
कालमंदिर-द्वार पर मैं मौन हूँ
कह नहीं सकता कि अब मैं कौन हूँ

देवता ! अब भी बचा लो बाण को
रोक दो उठते हुए तूफान को
वासना का विष न पीने दो इसे
शुद्धता में सदा जीने दो इसे

शान्त कर दो चिर पिपासित प्राण को
तम-ग्रसित होने न दो कवि बाण को
भारती का वरद पुत्र अजान हूँ
तिमिर पर तिरता हुआ दिनमान हूँ

शिखर से गिरने न दो अस्तित्त्व को
मत करो कामान्ध सुप्त कवित्व को
मैं विवाहित मलयतरु हूँ मगध का
दो मुझे आलोक अनुपम अवध का

मिली थी वनवास की उर-प्रेरणा
कर रहा अन्तर-गिरा की वंदना
दिव्य रेखा-मर्म को मैं जानता
बाण अपनी ज्योति को पहचानता

प्रखर पथ-स्वर प्रीतिकूट-प्रभात से
मन मुखर हवनाग्नि-मंत्र-प्रपात से
हस्त में अंधी वधू का हस्त है
वत्सवंशी धर्म-धृति-अभ्यस्त है

ओह, मेरे भीष्म मन में मोह क्यों ?
माधवी, तू कर रही विद्रोह क्यों ?
रूप-रथ मत हाँक नयन-कुणाल में
सदा स्वप्नालाप कर सुर-ताल में

काव्ययात्री आ रहा अब लक्ष्य पर
मत गिरा दृग-फूल यौवन-वक्ष पर
रामगिरि पर यक्ष को मत छेड़ तू
माधवी, मत कर कभी अंधेर तू

तम-प्रलय में डूब मत छवि की मही
बाण अब वाराह-सा यौवनजयी
ज्योति-दन्तों पर उठा लूँगा तुझे
सृजन-शय्या पर जगा दूँगा तुझे

द्रविड़ नारी दिव्यता की मूर्त्ति है
आर्य-आभा की अखंडित पूर्त्ति है
हूण-तम-आक्रमण मत कर देह पर
शक-प्रहार सफल न होगा स्नेह पर

देख अब अवतरित नव वाराह को
छू न उज्ज्वल स्वत्व-अग्नि-प्रवाह को
चन्द्रिका के पंख पर रवि को चढ़ा
चल चरण को विमल पथ पर अब बढ़ा

आज से यह वाण तेरा बन्धु है—
बहन-हित दृग-बिन्दु में सुख-सिन्धु है
जोड़ ले भातृत्व-बन्धन प्राण से
माँग ले कुछ आज अपने वाण से

कर्ण-सा मैं हूँ खड़ा कुछ बोल दे
वचन का निष्कपट पट अब खोल दे
अब विहंगम नीड़-पथ की ओर है
नयन में पट्वर्प-सुधि-झकझोर है

क्या कहा ? दूँ नाट्य की सब सम्पदा ?
रहूँ तेरे संग भी मैं सर्वदा ?
आज से भाई बहन का दास है
अमल मन को चिर धवल विश्वास है

किन्तु मेरी कला-यात्रा शेष अब
देखता हूँ दूर से ही देश अब
कर रही होगी प्रतीक्षा संगिनी
रो रही होगी पवित्र विहंगिनी

उठ रही होगी घटा परिवार में
व्याप्त होगा विरह शोण-कछार में
बहन, द्रुत प्रस्थान का वरदान दे
सहज करुणा की मधुर मुस्कान दे

बाण केवल नाट्य-अभिनेता नहीं
मंच पर रस-भाव-विक्रेता नहीं
रम रहा मन उर-उदित साहित्य में
दृष्टि मेरी लीन काव्यादित्य में

नाट्यमंडल मे उदासी छा गई
माधवी स्वामित्व जिस दिन पा गई
प्रचुर कोपांजलि-समर्पण-काल में,—
व्याप्त विस्मय मित्रमण्डल-भाल में

द्रव्य-संग्रह-हित न करता मैं भ्रमण
कर रहा मैं सूक्ष्मतम अनुभव-चयन
दे दिया सर्वस्व ही तो क्या हुआ ?
कौन समझे प्राण-मन का यह जुआ

बेच देता यदि कहीं आदर्श ही
मुझे क्या कहती मगध की मृदु मही ?
पूज्य उडुपति को दिखाता मुँह भला ?
कोसती रहती मुझे दिव्या कला

✓ काव्य, जीवन का घना सम्बन्ध है
कल्पना तो प्राण की ही गंध है
छन्द-स्वर में गूँजती मन-गीतिका
मृदुल कविता आत्म-रञ्जित प्रीतिका

मृच्छकटिक सुनाट्य के उपरान्त ही
द्रुत हुई अभिनीत विक्रम-उर्वशी
फिर तुरत ही सरसतम शाकुन्तलम्
शरद्-पूनम-सी चतुर्दिक उज्ज्वलम्

प्रेक्षकों में कृष्णवर्द्धन : नृप-अनुज
रसोद्वेलित काव्य-मर्मी वह मनुज
कर्ण-दृग उत्सुक, हृदय-मानस प्रखर
प्राणकी प्रति-ध्वनि अधर पर भी मुखर

ध्वनित रस-वर्षण क्वणित शृंगार से—
प्राण के इस पार से, उस पार से
रंग-रूप-तरंग ज्योत्स्ना-धार से
गीति-गुंजित प्रीति सप्तक तार से

भाव-भाषा की अतुल अभिव्यंजना
भेष-भूषा में अतीत-प्रदर्शना
काल के अनुकूल आकृतियाँ सभी
नाट्यशाला में विशाला-विधु अभी

माधवी कल उर्वशी-प्रतिमूर्त्ति थी
स्वर्ग से उतरी हुई-सी स्फूर्त्ति थी
उड़ रही थी अवनि से आकाश में
छुप गई थी दर्शकों की श्वास में

पुरुरवा से मिली जब वह मोहिनी
हुई गुंजित स्वप्न-सुर की सोहिनी
इमन में बिछुड़ी, कला की खण्डिता
अन्त में फिर खिली मुग्धा पुलकिता

और, जब वह कण्व-वन में चल पड़ी
स्वर्ग से फूटी अचानक निर्झरी
हुई छोटी कचुकी शृंगार की
उठी आँधी उसी क्षण झंकार की

खिलखिलाहट से विपिन भी खिल गया
रूप का उद्यान स्वर से हिल गया
एक दिन दुष्यन्त को आना पड़ा
प्राण पर ऋतु-फूल बिखराना पड़ा

स्वप्न की सखियाँ छिपीं जब छाँह में
बँध गई वह रूपसी नृप-बाँह में
नयन की कलियाँ झड़ी प्रस्थान से
वेदना निकली मधुर मुस्कान से

विरह-वेला माधवी करुणा बनी
मातृपथ की सुधिमयी तरुणा बनी
शाप जब वरदान सहसा हो गया
प्रेम में दुष्यन्त सब कुछ खो गया

भरत से ही बना भारतवर्ष रे
विश्व में संघर्ष ही उत्कर्ष रे
कृष्णवर्द्धन हुए हर्षित बाण से
गूँज-सा मैं भी गया जयगान से

घनी मैत्री हुई, उर खिलने लगा
नयन-मन को प्राण-रस मिलने लगा
तृप्त अन्तर विविध काव्य-विलास से
मुख परस्पर मुखर, मधुमय हास से

खिली वाणी में वसन्ती यामिनी
छन्द में जागी कला की कामिनी
उड़ी मन में वन-मयूरी-वेदना
हुई विरहाकाश में द्युति-गर्जना

और, जिस दिन कृष्ण स्थाण्वीश्वर चले
नयन-गृह में अश्रु के दीपक जले
स्वर्ण रथ जब हुआ ओझल दृष्टि से
हो गया मन करुण अन्तर-वृष्टि से

मिलन-बिछुड़न प्रकृति का संगीत है
मोह-माया भी मनुज की प्रीत है
हर्ष और विषादमय जीवन-धरा
तम-किरण परिव्याप्त यह प्राणाम्बरा

हुआ मैं निस्तब्ध काल-प्रहार में
नाट्यशाला जल गया अंगार से
एकता के पंख सहसा कट गए
मंच से विक्षुब्ध शिल्पी हट गए

द्रोह से ज्यों सुदृढ़ वैशाली-पतन
हुआ भंग ललित कला का संघटन
जोड़ने से जुट न पाए तार रे
छुप गई कवि बाण की झंकार रे

रह गया मैं ही अकेला राह में
संग प्रिय ईशान आह-कराह में
कला की वह वहन भी अब है कहाँ
घिर रहा नैराश्य-निशि का तम यहाँ

तिमिर में नूतन किरण कैसे भरूँ
कहो मेरे प्राण, अब मैं क्या करूँ?
सिद्धियों का पात्र मेरा रिक्त है
भाव से परिपूर्ण हृदय अतृप्त है

मित्र! जीवन की लहर उद्दाम है
चलो, चलना ही हमारा काम है
प्रबल बाधा में विजय का वास रे
मेघ-वन में ही शरद्-आकाश रे

कौन कहता है कि मैं निष्प्राण हूँ
काल हे! मैं ही मगध का त्राण हूँ
बाण हूँ मैं बाण, पथ-अभियान हूँ
लक्ष्य पर आया हुआ तूफान हूँ

रम रहा है हृदय राग-विराग में
कला का अनुराग ही गृह-त्याग में
मित्र! हम आए प्रसिद्ध प्रयाग में
स्नान संगम का लिखा है भाग में

कृष्ण-क्रीड़ाभूमि देखी थी वहाँ
भरद्वाज-सुपुण्य-वन आश्रम यहाँ
सिद्ध काशी में रहूँगा कुछ समय
प्राप्त होगी वहीं शास्त्रों की विजय

हाय रे मन, वाण भूखा सो गया
आज मेरे भाग्य को क्या हो गया
शिवपुरी में नींद क्यों आती नहीं ?
क्षुधित साँसें स्वप्न बिखराती नहीं

लोक-कवि ईशान गृह की ओर अब
घिर रहीं दुख की घटाएँ घोर अब
तिमिर में नूतन किरण कैसे भरूँ
कहो मेरे प्राण, अब मैं क्या करूँ ?

रुग्नता से छटपटाता हूँ यहाँ
देखता हूँ किसी परिजन को कहाँ
तन प्रखर ज्वर-ग्रस्त, मन अकुला रहा
धर्म-ढोंगी नही कोई आ रहा

वत्सवंशी वाण की अब यह दशा
प्राण पर भी घिर रही दुख की निशा
कहाँ जाऊँ, क्या करूँ मैं मौन हूँ
रात्रि में किससे कहूँ, मैं कौन हूँ

अष्टम सर्ग

जीवन-अंबुधि-तल-अतल-गर्भ से मानव
मुक्ता निकालता नित अभेद अनुभव का
भाषा-प्रसून में भाव-सुरभि भर-भरकर
देता सशक्त संकेत स्वप्न संभव का

रे समय-शिला पर अमिट अजन्ता-रचना
संभव है कालपुरुष के कोमल कर से
अमरत्व प्राप्त होता केवल उस कवि को
जो शब्द-स्वर्ग गढ़ देता शाश्वत स्वर से

जीवन ही उद्गम कला-चेतना-अणु का,
नयनानुभूमि में ही रंगों की वाणी
तपती वसुन्धरा जब अविरल ज्वाला से
तब उमड़-घुमड़ उठते बादल वरदानी

जीवन-सागर में उच्छल लहरें उठतीं
वेदना-विचुम्बित ज्योत्स्ना-प्लावित निशि में
अन्तर-प्रभात-उदयाचल से उड़-उड़ कर
कल्पना-किरण आती-जाती दिशि-दिशि में

केवल सुख से संभव न स्वप्न शब्दों का,
कठिनाई में भी कला-चंचला मिलती
दयनीय परिस्थिति की भीषण आँधी में
दर्शन की कलियाँ प्राण-वृन्त पर खिलतीं

अति कठिन विश्व के वन में काव्य-तपस्या
अंगारों का आसव पीना पड़ता है
तम-किरण-गहन मथन के बाद दृगों से
कल्पना-सृजन-घन-इन्दु-विन्दु झरता है

साहित्य काल का दर्पण जिसमें जीवन—
चेतना-तरंगों को करता प्रतिविम्बित
अनुभूत सत्य के हंसिल हिमशिखरों पर
सौन्दर्य-शक्ति होती शाश्वत शिव-चुम्बित

शब्दों में स्पंदन भरती जो सांगीतिक
जीवित प्रलम्ब वह उक्ति-कला मानव की
संतुलित ज्वार की प्राण-परिष्कृत भाषा
गढ़ती उफनाती इच्छाएँ अनुभव की

उठ-उठ विचार-रश्मियाँ मंत्र-मुक्तादल
बिखराती तन्द्रिल बाणभट्ट के उर में
ज्यों वेद-ऋचा झरती प्रभात-वीणा पर
सम्राट् हर्ष के स्वर्णिम अन्तःपुर में

पूजतीं वनिताएँ स्वर-चरण
लाज से झुक जाता मैं मौन
अपरिचित-सा अब तक हूँ यहाँ
बताता नहीं कि मैं हूँ कौन

कथा कर दूँगा शीघ्र समाप्त
लिखूँगा पुस्तक एक नवीन
चुन चुका शीर्षक 'कादम्बरी'
कल्पना-भूमि भाव-तल्लीन

मिली थी उज्ज्जयिनी में लहर
खिले थे कुछ प्रयाग में फूल
किन्तु यह वाराणसी महान
कि उड़ती यहाँ किरण की धूल

उतरने को आकुल अनिमेष
नयन के ओझल अगणित चित्र
भ्रमण-वन के समस्त तरु-पुष्प
लग रहे अब मेरे मन-मित्र

रचे अभिनेय सुकाव्य अनेक
किन्तु वे रहे न मेरे पास
काल-भूतल में भर रस-विन्दु
स्वयं उर-रिक्ताकाश उदास

घिर रहे फिर अम्बर में जलद
आ रही अब गंगा में बाढ
उमड़ता आता है चुपचाप
सजल श्यामलता का आषाढ़

स्वप्न-श्रावण में शोणोर्वशी
झिलमिलाती नित बारम्बार
झनझनाती माया-मंजरी
सनसनाती श्वासिल झंकार

सान्ध्य घन-तम में विहग-कुमार
सुनाते जब कुलकिल कल्लोल
निकल आते छन्दिल छवि-संग
गूँजती साँसों के कुछ बोल

व्योम के मेघपत्र पर अचिर—
प्रभाक्षर लिखता सत्वर कौन
विरह-वाक्यों को पढ़ कर हृदय
न जाने क्यों हो जाता मौन

बुलाती विधु को स्मित वेदना
किन्तु हो जाते मूर्च्छित प्राण
ढूँढता मैं जब विस्मृति ज्योति
काँपने लगते स्मृति के गान

भुलाता हूँ मन को चुपचाप
किन्तु जग उठती पीर-तरंग
मिला जब से दुखमय संवाद
न उठती उर में रंग-उमंग

सिहरते सृजन-स्वप्न-संवेग
दृगों से झरती गंधित आह
प्राण में भर-भर जाती व्यथा
शोक की पीड़ा हाय, अथाह

कहाँ जाऊँ, अब मैं क्या करूँ
समझ मे आता कुछ भी नहीं
कुसुम-कोलाहल मन में व्याप्त
शान्ति मिलती न हृदय को कहीं

रिक्त अन्तर आनन्द-विहीन
ढूँढता यौवन परिणय-छन्द
नियत्रहीन तमाग्नि-स्फुलिंग
विपाविष-संकुल सर्पिल द्वन्द्व

स्वत्व में दृढ़ निष्पक्ष-प्रकाश
भाव में वाछित गति-सयोग
मात्र मेरे मन में अभिशप्त
आत्म-शंका का उन्मन रोग

अहर्निश असि-पथ असफल नहीं
सफलता भी तो मेरे पास
दीखता विस्फारित मरु-ज्वाल
सूझता नही वसन्त-विलास

शिशिर-तन पर पत्रांशुक-लता
स्वयं लहरा उठती चुपचाप
एक ही मन में हर्ष-विषाद
अमृत-उल्लास, गरल-संताप

विषम-स्थिति-संगम पर सप्राण
करूँ कैसे वाणी का दान
कहूँगा सत्य, सृजन के बिना
वाण अब भी जग में अनजान

मिटाऊँ कैसे मन का शोक
उठ रही नित नयनों में आग
लपट - कापाय - आवरण पहन
हो रहा रेखा-सदृश विराग

चित्त-स्थिरता का अमित अभाव
विरोधाभास-उदधि में ज्वार
वह रहा चिन्ता का वातास
शुष्क लगता तटस्थ संसार

प्रहारों से आप्लायित अक्षि,
चेतना पर कुहेलिका व्याप्त
ज्ञात कुछ भी न प्राण को अभी
कि होगा क्या जीवन में प्राप्त

यहाँ आया कुछ लेने नहीं
करूँगा शव्द-सिन्धु-अवदान
जहाँ से तपन, वहीं से सृजन
यही तो मेघदूत का गान

ग्रंथ करुणा का व्योम अशेष
श्याम घन-खण्ड छन्द के चरण
वाष्प उत्तप्त श्वास के शव्द
वायु-संवेग भाव-प्रकरण

चंचला कुटिल कटाक्षान्योक्ति
मेघ-गर्जन पावस-रस-रोप
चमत्कृत यमक अभंग हिल्लोर
सलिल-संकुल सामासिक कोश

स्वत्व-तप से अन्तस्-सौन्दर्य
सृजन करता शिवत्व-संगीत
खेलता नयनों में निस्तब्ध
इन्द्रधनुपी सुधि-स्नात अतीत

कल्पना का भी वासस्थान
भ्रान्त विस्मृति में होता कहीं
अन्तरामंत्रित शुचि रुचि-राग
दृष्टि-निष्ठा-अनभिज्ञ नहीं

सघन श्रावण की कज्जल रात
फूटने को अब जलद-प्रपात
मेघ से चाँद, चाँद से मेघ
कर रहे लुक-छुप विद्युत-वात

देखती अवनी व्योम-विलास
पवन-घन-वन में ज्योत्स्ना-हास
मनाता तिमिर तरल उल्लास
घटा-बन्धन में चन्द्राकाश

क्वणित गंगा पर नभ-प्रतिबिम्ब
देखते बाणभट्ट सुकुमार
दृगों में वेणी के संस्मरण—
पिरोते मणि-मुक्ता के हार

प्रणय की प्रथम अलंकृत निशा
दिशाओं में हो जाती व्याप्त
अंध नयनों के प्रेमालाप
कर रहे अब ज्योतिर्घन प्राप्त

वंदना की विधि-मूर्त्ति सजीव
दे रही थी अनन्त उपहार
देख कर मौन शरद्-श्री-रूप
प्राण में उठती थी झंकार

पिता ने देखा था जब उसे,
लोल लोचन में थे संगीत
पढ़ रही थी गुरुकुल में शास्त्र
प्राण थे उसके प्रखर पुनीत

विप्र-कन्या वह थी अति दिव्य
दृगों से झरते थे संस्कार
कंठ में था लालित्य-विलास
रूप पर था राका-विस्तार

चकित थे पिता देख कर ज्योति,
बनाती थी वह अनुनय-चित्र
रंग से भरती थी वह भाव
हृदय था उसका सदय पवित्र

किन्तु जब रोग-ग्रस्त वह हुई
नयन से हुआ प्रकाश विलीन
स्वर्ग से उतरी-सी उर्वशी
अचानक हुई विभा से हीन

चिकित्सा से न हुआ कुछ लाभ
रूप पर जले तिमिर के दीप
थक गए कुसुमपुरी के वैद्य,
न खुल पाए नयनों के सीप

पिता थे घटना से अज्ञात
मिला कुछ भी न कभी संवाद
हो गया पाणि-ग्रहण सोल्लास
मौन ही रहा वसन्ताकाश

वधू आई जब गृह में हाय,
हो गया तुरत पिता का अन्त
शोक से प्रीतिकूट संतप्त
प्रकम्पित दूर-दूर के सन्त

किन्तु मैं अंध पूर्णिमा देख
लगा करने ज्योत्स्ना में स्नान
भर लिया वाहुपाश में उसे
न होने दिया चन्द्रमुख म्लान

तरंगें उठने लगी अनेक
हृदय में उठी अमिय-हिलकोर
रूप के उसी क्षितिज पर हुआ
कला-जीवन का उज्ज्वल भोर

अंध दृग के दर्पण को देख
हो गया मैं ही द्रुत प्रेमान्ध
कूकने लगी प्राण-पिक मुग्ध
फैलने लगी वसन्त-सुगंध

किन्तु वेणी विह्वल ही रही
न टूटा उसका दृग-संगीत
समझ पाई न स्यात् वह कभी
कि उसकी हार कि उसकी जीत

वस्तुतः विजय-पराजय त्याग
हृदय में गूँज रहे थे प्राण
उठे जो, उठे रहे अव्यक्त
वेदना के हर्षित तूफान

प्रात में साँझ, दिवस में रात
देखती थीं आँखें चुपचाप
विहँस कर करती थी वह हाय,
प्रखर अन्तर का तिमिर-विलाप

एक दिन कहा उसीने—"स्वामि!
स्यात् मैं शाश्वत काव्यार्चना
तिमिर में करती हूँ रागात्म-
ज्योति-सज्जित अन्तर्वेदना

"रम्य रेखा ही मेरी दृगी
पूर्णता वह मेरी स्वच्छन्द
लुप्त होऊँगी जब मैं कभी
मृगी-गति हो जाएगी बन्द

आत्म-ताण्डव में जीवन लीन
कमल पर प्राण-चरण-झंकार
खुल रहे सृजन-त्रिभंगी नेत्र
कल्पना-काम स्वयं साकार

नवम सर्ग

तिमिर-तरंगित रात्रि-सिन्धु पर
भय की वायु विचरती
वट-अश्वत्थ-विशाल दुर्ग में
शंकित देह सिहरती

जीर्ण-शीर्ण देवी-मंदिर में
एक दीप जलता-सा
मानो महाप्रलय-अम्बर में
मृत्यु-सूर्य ढलता-सा

दिग्दिगन्त दुर्गंधपूर्ण
क्रन्दन-विहीन कोलाहल
लगता जैसे अंधकार
पी रहा स्वयं हालाहल

कापालिक-सम्मुख मूर्च्छित-सी
सुप्त अचेतन तरुणी
ज्यों प्रचण्ड ज्वाला से जाती
सूख, ग्राम-पुष्करिणी

अरुण वस्त्र-आवृत शरीर
मंत्रोच्चाटन में तन्मय
ग्रीवा में रुद्राक्ष-माल
मुख-व्याघ्र भस्ममय निर्भय

भ्रुकुटि-मध्य शोणित चन्दन
ऊपर त्रिपुंड दंभोन्नत
सुरा-पात्र सम्मुख, गुग्गुल की—
गंध अनिल से अवगत

बाज-चंचु में ज्यों विहगी
झंझा-पथ में फँस जाती
कापालिक के निकट चेतना-
शून्य नारि अकुलाती

भौंक रहे कुछ श्वान, उलूकों—
के विचित्र रव कूजित
कहीं-कहीं शृंगाल, विलम्बित
सुर में रह-रह मुखरित

खर्मर-खर्मर तरु-पत्रावलि
साँय-साँय शत झोंके
देख भयंकर रात्रि-दृश्य यह
किसका हृदय न चौंके

बाणभट्ट रुक गए इधर ही
वृद्धा उधर खड़ी-सी
विस्फारित क्रोधित अपलक
आँखें अनजान डरी-सी

मेघाच्छादित व्योम, घुप्प
तम में तड़ितों के कौतुक
वक्र ज्योति में विस्मय-दृग से
ताक-झाँक वेगोत्सुक

सबल हस्त में मोटा सोंटा
मन में लोहित भाषा
छड़प सिंह-सा नरपिशाच के
भक्षण की अभिलाषा

ओजस्वित संकल्प-चेतना
श्वासों में रण-गर्जन
प्राणों में अरि-रुधिर-प्यास
वीरोचित व्याकुल यौवन

बाण कृपाण लिए मन में
गांभीर्य-ढाल भी कर में
काव्य-बाँसुरी त्याग कृष्ण-सा
पाञ्चजन्य नव स्वर में

"ओ अधमाधम अज्ञ, सिद्धियों—
में मत आग लगाओ
मानवता को शान्तिदायिनी
सात्विक सुधा पिलाओ

"नारी का अपहरण कभी भी
करो नहीं छल-बल से
सींचो जीवन-मंत्र सदा
करुणा के निर्मल जल से

"सिद्ध-पंथ में ही असिद्ध
मानव की तांत्रिक माया
ज्यों प्रकाश के बाद मात्र
रह जाती निष्प्रभ छाया

"सप्त वर्ष में देखी निन्दित
घृणित क्रूर लीलाएँ
तन्त्र-साधकों के फेरे में
पड़ जातीं ललनाएँ

"ओ जघन्य पापी अपराधी!
आज न रहने दूँगा
इस श्मशान में कल से
दूषित मंत्र न पढ़ने दूँगा"

लपका धीर मृगेन्द्र, सुदृढ़
पंजों से थप्पड़ मारा
खड्ग निकाला उसने तो
डंडे का लिया सहारा

मल्ल-युद्ध-पश्चात् कपालिक
ध्वस्त हुआ धरती पर
रहा लोटता प्राण-वायु में
मूर्च्छित-सा सर्पिल स्वर

विजयी कर में वेसुध अवला-
तन को स्वयं उठाकर
चले वाण वृद्धा के सँग-सँग
लक्षित पथ पर सत्वर

सुरसरि-तट पर नारी-मुख पर
जल-मुक्ता वरसाया
मिली न दृग-चेतना उसे तब
तन को पुनः उठाया

वृद्धा हुई अधीर, दिशाएँ
ध्वनित हुईं क्रन्दन से
बोले वाण : अभी आता हूँ
डरो न निर्जन वन से

घाट अभी कुछ दूर, चलूँ—
धीवर को स्वयं जगाऊँ
तुरत वैद्य के यहाँ तुम्हारी
पुत्री को पहुँचाऊँ''

फेनिल उभरी नदी, धार पर
सर-सर नौका जाती
मन्द अनिल-शीतल-स्पंदन से
दृग में झपकी आती

घन-अरण्य में उषा-भारती
रश्मि-राग विखराती
दूर एक माँझी गाता, प्राकृत
में प्रथम प्रभाती

पौ फटते ही अन्य तरणियाँ
तिरने लगी लहर पर
जाल फेंकने लगे मत्स्य-हित
मछुए प्रखर भँवर पर

पाल-स्तंभ पर श्वेत विहग
पंखों को लगे हिलाने
काशी-तट से स्नान-मंत्र-ध्वनि
लगी यहाँ तक आने

सम्मुख उज्ज्वल भवन-श्रेणियाँ,
अट्टालिका पुरातन
मणिकर्णिका-घाट पर शत-शत
छत्र-सुसज्जित जनगण

उतरे वे, जब तीर-तरंगों पर
स्वर्णाभा उतरी
सहसा किरणमयी कुछ साँसें
अभी अचानक सिहरीं

संध्या में माता के सँग-सँग
मन्द मधुर मुस्काती—
आई वह मेरे सम्मुख
नयनों में नीर सजाती

रूप-रंग लावण्य-स्निग्धता
सब कुछ है नारी में
दिन में भी चाँदनी चहकती
पाटल की क्यारी में

अरी कौन तुम स्वप्नमोहिनी
शुचि शृंगार-सफलता
बँधी हुई गांभीर्य-वृन्त से
कलिका-सी चंचलता

सुधा-यामिनी मृदुल अधर पर
नयनों में रस-राका
केश-राशि पर शुभ्र कुसुम ज्यों
अलका-पंथ-वलाका

मुखमण्डल पर ज्योति कि जैसे
पूनम पर दृग-वाती
भुज-मृणाल ज्यों काम-लता
कुसुमित ऋतु में लहराती

भ्रू-विलास ज्यों मदन-चाप
यूथिका-दन्त मन-माला
नख से शिख तक सुरुचि स्वप्न की
काव्य-कामिनी-बाला

पपनी पर कमनीय निशा की
आमंत्रण-अभिलाषा
कौन पढ़े मृदु नयन-नीड़ की
उड़ने वाली भाषा

प्राण-पत्र पर लिखित श्लोक को
श्वास गा रही मन में
उत्सुकता की हिरण विचरती
हरित हृदय के वन में

कंज-वक्ष के अन्तःपुर में
रत्न-रेणु उड़ती-सी
गढ़ती ज्यों कामना सुरभि—
छाया में कथा किसी की

कटि पर क्वणित किंकिणी ज्यों
आती कविता कुछ कहती
नूपुर-गुंजित पग ज्यों हिम—
मग में निर्झरिणी वहती

द्राक्षालता - वसन - आच्छादित
तन-तरु नव वासन्ती
सुन्दरता कर रही स्वयं
निज दर्पण से विधि-विनती

मन-मुग्धा मल्लिका, सुअनुजा
कवि मयूर की, कोमल
महामहिम सम्राट् हर्ष को
देते जो छन्दोत्पल

पति-वियोग में शिशिरा माता
सेव रही शिव-नगरी
सुता मल्लिका सँग रहती
ज्यों ग्रीष्म-ताल में लहरी

चिर कृतज्ञ वृद्धा विदुषी
पूछती बाण से परिचय
स्नेहार्पित मुस्कान लिए
करती मन में कुछ संचय

वत्सवंश के 'भानु-पुत्र का
द्रुत सगर्व आलिंगन
फुल्ल मल्लिका देख रही
कुन्तल का शीतल चुम्बन

अरुण कपोलों को नयनों की
रश्मि छू रही चुपके
ज्यों कपोत-क्रीड़ा कोई
देखता कही छुप-छुप के

लज्जित चारों नयन, किन्तु
आवरण ज्योति का चंचल
श्वास-वायु से लहरा उठता
दो रंगी दृग-अंचल

मन को रोक रहा दृढ़ जीवन
ज्यों समीर को कानन
किन्तु दीख पड़ता रहस्य
ज्यों घन-ओझल चन्द्रानन

बाणभट्ट गंभीर कि जैसे
रूठे हुए, प्रिया से
चुप सुशील मल्लिका कि जैसे
ज्ञात न कुसुम-क्रिया से

किन्तु ढली-सी संध्या, देख—
रही जलती-सी बत्ती
स्वर्णकार ज्यों भस्म-पात्र में
अन्वेषित मणि-रत्ती

चली गईं दोनों, ज्यों तट से
उन्मीलित हिलकोरें—
दूर-दूर जाकर भी लेती—
रहती पवन-हिलोरें

कुछ उमंग भर गई हृदय में
कुछ तरंग-सी आई
ज्यों मधुऋतु के हरित राग से
तरु पर फिर तरुणाई

बार-बार वे मिले परस्पर
प्राण, प्राण को भाए
इंगित स्पष्ट हुए नयनों के
ऐसे भी दिन आए

लताकुंज में ज्यों दो पंछी
चंचु मिला कर गाते
वैसे ही कुछ गीत हृदय से
उमड़, अधर पर आते

कलमी आम्र-फाँक-सी आँखें
कुछ ऐसी मुस्काई
मानो पावस-उषा, दामिनी-
के सँग बाहर आई

विमल मल्लिका की किंकिणि
हो उठी ध्वनित-सी चुपके
ग्राम-वधू जाती ज्यों लुक-छुप
पति-गृह में रुक-रुक के

मधुर मल्लिका चरणांगुलि से
सुधि शब्दांकित करती
रजत रात में हिम-कणिका ज्यों
पद्म-पत्र पर झरती

प्रखर बाण की कला देख कर
चकित हुई वह तरुणा
रवि-चरणों पर झुक, विलीन–
हो जाती ज्यों नित अरुणा

वह अतीत का स्वप्न देखती
वर्तमान के दृग से
कस्तूरी-सी गंध बिखरती
रूप-राशि-मन-मृग से

सो-सो कर कल्पना-कुसुम पर
रचती थी स्वर-राका
उड़ती थी घन के निकुंज में
चपलावद्ध वलाका

कहते थे भाई मयूर—"तू
कवि-गृह में जाएगी
निश्चय ही मल्लिके, कला का
कानन तू पाएगी"

एक ज्योतिषी ने भी कुछ
ऐसा आभास दिया था
उस दिन मैंने गृह-दर्पण को
हँस कर चूम लिया था

कह दी थी वाटिका-वीथि पर
सखि से बात रसीली
बिखर गई थी स्वर-वृन्तों से
चन्द्र-चमेली नीली

होगी क्या चरितार्थ, बन्धु के—
मुख से निकली वाणी ?
प्रीतिकूट की हूँगी क्या मैं
वाण-वधू कल्याणी ?

माता तो संकल्प कर चुकी,
भाई स्वीकृति देंगे ?
निज भविष्य-घोपणापाश में
सत्य-स्वप्न भर लेंगे ?

लंका से लौटी सीता-सी
मैं पवित्र नारी हूँ
अग्नि-ताप से खिली हुई
गंधित कलिका-क्यारी हूँ

काशी-तट पर बाणभट्ट की
कथा हो रही शेष
मन को बुला रहा रह-रह कर
मातृ मागधी देश

निष्फल-सी साधना, हृदय मे
करती हाहाकार
'कादम्बरी' किन्तु प्राणों में
भरती नव झंकार

दृग में नत मल्लिका अमल,
साँसों में स्वप्न-समीर
जन्मभूमि के लिए किन्तु
अन्तस्तल अधिक अधीर

आज उदासी व्याप्त मधुरतर
विकल मल्लिका-मन में
डूब रहीं दोनों आँखें
उमड़े-घुमड़े से घन में

तरणी पर जा रहा कौन
लहरों में कुछ कहता-सा
प्रेम-पुष्प आ रहा एक
उर-गंगा पर बहता-सा

कौन कह रही—"नही भूलना,
नहीं भूलना राही,
विसरा मत देना प्रेमिल
आत्माओं की गलबाँही

"परदेशी भूलना नहीं
आशा में वास करूँगी
साँझ-सवेरे मन के घट में,
लोचन-नीर भरूँगी"

चली जा रही है नौका
लहरों पर पंख पसारे
विहगों के दो झुण्ड, उतरते
आते नदी-किनारे

विन्ध्याचल की शिखर-श्रेणियाँ
छूतीं मुक्त नयन को
विविध पुष्प की गंध-रागिनी
घेर रही मृग-मन को

नाविक! तीव्र तरी को अब
धीरे-धीरे जाने दो
अनुपम सुषमाओं को दृग के
दर्पण में आने दो

नक्षत्रों की भाँति श्वेत—
फूलो से शैल सुशोभित
पुलकित पशु-शावक-सुकेलि से
सघन वन्य-पथ फुल्लित

विविध फलों से लदे वृक्ष पर
उच्छल चंचल वानर
घन-प्रत्याशित वन-कलापिनी
सुनती गिरि-निर्झर-स्वर

बँधा रुचिर चरणाद्रि-दुर्ग
गत्यात्मक गंग-सलिल से
रजत ऊर्मि-अप्सरी उमंगित
पंखिल हिरणानिल से

चिल्लाता उस पार कौन?
द्रुतगति से चलो पुलिन पर
स्यात् व्यथित नारी-कंठों से
ध्वनित क्रुद्ध कम्पित स्वर

क्रूर-दस्यु-उत्पात-ग्रस्त
पंथी अतिशय दुख पाता
सीमित संबल भी वन-पथ में
जहाँ-तहाँ लुट जाता

श्रीपर्वत पर ललकारा था
निर्मम व्याघ्रिल बल को
सदा सताता जो संध्या में
तीर्थित दुर्बल दल को

महाप्रबल सम्राट् हर्ष अब
करते शान्त उपद्रव
'संस्कृत शासन-संचालन से
सर्वोन्नति-गति संभव

दशम सर्ग

सप्त वर्ष पर साहित्यिक वाणेन्दु-आगमन
नम्र नयन में अश्रु-कुसुम-अन्तर्हित क्रन्दन
श्वास-चकित सस्वरा सारिका उच्छल तत्क्षण
स्वजन-मिलन से सुधि-चित्रोर्मिल भृंगिल यौवन

प्रियापाश-परि-त्याग मित्रमण्डल-दल आए
रोम-रन्ध्र में चन्द्र-गंध-गति-गुंजन छाए
प्रिय-दर्शन-हित दृष्टि-शिखर पर प्राण-पिपासा
मध्य रात्रि तक मुखरित मधुर मोह की भाषा

प्रीतिकूट के बिछड़े उर-जन तुमुल-तरंगित
तिमिरित नौका ज्यों सागर पर ध्रुव-दिशि-बिम्बित
आत्म-प्रतीक्षित उडुपति का प्रिय अनुजालिंगन
नीरित नयनों में सम्पीड़ित क्रीड़ित गुंजन

आगत गुरु-चरणों की धूलित किरण भाल पर
विरह-विलम्बित व्यथा वरण करती सुख का स्तर
निद्राहीन निशीथ-मिलन कुछ करुणिम-अरुणिम
संस्मरणित पथ-कथाभूमि पर प्राची स्वर्णिम

दैनिक हवन-कुण्ड पर वैदिक मंत्र बिखरते
अर्चिष्मान वाण के संयत प्राण सिहरते
वनिता के दल धेनु-मांगलिक पूजा करते—
अक्षत-चन्दन-पुष्प पाद-पीठों पर धरते

प्रीतिकूट का प्रखर प्रभात तपोवन-सुन्दर
सिकता-द्वीपित शोण-धार पर जल हिलोर-स्वर
भाग रहीं हिरणियाँ इधर से उधर पुलिन पर
द्रुमदल पर विहगियाँ चहकतीं पंख खोल कर

अरुणोदित अम्बर का रश्मिल उर धरती पर
झरता ज्योतिर्नद नीलाद्रि-शिखर से झर-झर
तुहिन-विन्दु पर रत्न-त्वचा का मसृण किरण-मन
लतापत्र से टपकित निशा-प्रसूनित रस-कण

चीनांशुक आवृत कटि पर ताम्रोज्ज्वल कलशी
वाष्पित जल-प्रवाह पर बजती मोहक वंशी
उषा-काल में अरुण जाल रचता शिल्पी रवि
छवि-गृह में छन्दायित होता करुणामय कवि

बाणभट्ट की स्वप्न-विभा फैली दिगन्त तक
आँखें उड़ने लगीं अंकुरित नव वसन्त तक
प्राण-पद्म-पंखुड़ियों पर उतरी अरुणाई
सुरभि-छटा कल्पनामयी साँसों पर छाई

भींगे भोजपत्र कुहियों से, सुधियाँ उतरीं
खुले कुसुम-कुन्तल, दिशि-दिशि मादकता बिखरी
राका-रजत-सिन्धु में डूबी मन की तरणी
कुमुदमयी हो गई चन्द्र-वन की पुष्करिणी

भाषा की भामिनी-यामिनी सम्मुख आई
मधुपालिंगित कलिका विधु-गृह में सकुचाई
भ्रू-विलास की प्यास तरंगित हुई नयन में
उठी गीत की लहर कपूरी चन्द्र-वदन में

भाव-कमल-कुच कस्तूरी, चन्दन से चित्रित
उर-द्रुपदा-प्रच्छदपट कल्पित कर से विस्तृत
स्वप्न-सरोवर में शशि-स्नान परागित समुदित
मन-कैलासपुरी में हर्षित कुंकुम वर्षित

एक रात की बात कि घटा घिरी अकुला कर
भाग गई बिजली सुदूर सकुचा-सकुचा कर
प्राण-गगन में वेणी-सुधि-विहाग की वाणी
अंधलोचना की सुगंध-सौगन्ध-कहानी

रेखा की स्वर-गंधा सीमित हरित हृदय में
मधुर माधवी की छाया भी उच्छल लय में
मुग्ध मल्लिका प्रणय-प्रसून हिलानेवाली
श्वास-राग में स्वप्निल सुधा पिलानेवाली

जन-मन-इच्छा : अब न रहे सूना गृह-कानन
आँगन में चमके नूतन नारी-चन्द्रानन
कवि मयूर-आगमन-सुनिश्चित शीत काल में
मंगल परिणय संभावित पुष्पित प्रवाल में

प्रेयसि-प्रेषित छन्द-पत्रिका रस-ऋतुवाली
तृण-तरंग पर चन्द्र-चुम्बिता ज्यों शेफाली
मदिर मोहिनी शब्द-शोभिनी रुचि की राका
आम्र-कुंज पर उतरी-सी आषाढ़-वलाका

नम्र वृन्त की छुई कली स्मृति-हिमकण पीती
आशा-किरण सँजो कर नित भाषा पर जीती
आत्म-सुरभि मेरी साँसों में मिली हुई है
कली अधखिली नहीं, नयन में खिली हुई है

उत्तर क्या दूँ तुम्हें? रूप की रात बुलाती
प्रणय-चन्द्रिका-लहर प्राण पर कुसुम चढ़ाती
मृगयालुब्ध किरात-कामना-सी सुधि-यात्रा
सदा टूटती नील मंत्र की तारका-मात्रा

भाव-भित्ति में बिम्बित दर्पण टँगा हुआ-सा
मेरा बँधा हुआ मन अब तक बँधा हुआ-सा
शय्या-सम्मुख सुधि-वातायन बन्द नहीं है
ऐसा मत समझो कि बाण में छन्द नहीं है

कान्तिमती स्मृति-पंक्ति अक्षि में उड़ती-फिरती
विद्युत-लहरी अन्तरिक्ष तक उठती-गिरती
प्राण-प्रियतमे! चिर अभिन्न स्थिर बाण तुम्हारा
देखोगी तुम सत्वर कूकित शोण-किनारा

प्रीतिकूट में मौनाकुल मल्लिका आ गई
नयन-नयन मे तृप्तिदायिनी विभा छा गई
शत-शत कोयल वत्स-द्वार पर स्वयं गा गई
आँखें उड़नेवाली पाँखें तुरत पा गई

चंचल चुम्बन-किरण कपोल-कली पर झरती
स्निग्ध चपलता-मृगी दृगी-दुर्वादिल चरती
पुष्प-बाण से रूप-रजत-रजनी कुछ डरती
सद्यः श्री-सौरभ-स्नाता मल्लिका सिहरती

लज्जित दृग में द्वन्द्व, छन्द साँसों के मनमें
उगा चाँद धीरे-धीरे उभरे यौवन में
बाहुपाश में प्यास—हृदय-आकाश बँधा है
हे असीम आनन्द, मलय-उच्छ्वास बँधा है

उषे ! न आँखें खोल, चाँदनी चहक रही है
देह-स्नेह की सुरा अभी तक छलक रही है
ऋतु वसन्त-शय्या पर जीवित स्वप्न-स्वर्ग है
प्रात ! अभी यह महाकाव्य का प्रणय-सर्ग है

धक्का देता कौन द्वार में ? दिवस हो गया ?
अरे हृदय का चाँद हृदय में तुरत खो गया ?
कौन मालती भाभी ? यह कैसी निठुराई
स्मरण करो आर्ये ! अपनी भी वह अँगराई

प्रथम मिलन की रात, बात सुनती न किसी की
गूँज रही पंचमी अभी तक प्राण-पिकी की
पूज्या निर्मोहिनी सम्हालो नूतन तन को
प्रीतित दिवस दिखा दो सरस निशीथित मन को

एक-एक कर आनेवाली खुल-खिल कर आती
फुल्ल मल्लिका अब न अधिक मुझसे सकुचाती
दीपशिखा जलती सुकक्ष में रात-रात भर
उठती तरल तरंग विहँसती वात-वात पर

मन्द-मन्द मुस्कान नींद पर पहरा देती
परी स्वप्न की तरी स्वर्ग-सरिता में खेती
छुपी छाँह में आशा-अंकित उगती माता—
जोड़ रही अब प्राण-पुरी से पावन नाता

स्वप्नाभा चम्पक-मुख-मुद्रा पर छाई-सी
कज्जल आँखें अमृतमयी कुछ अलसाई-सी
सहज सरलता स्नेह-भार से झुकी हुई-सी
तरणी जन्म-पुलिन पर आकर रुकी हुई-सी

प्रसव-पीर-संगीत हृदय का हार दे गया
कोमलतम बालेन्दु रश्मि-झंकार दे गया
मिलन, आत्म-सिंचित सुरुचिर उपहार दे गया
अधर-विचुम्बित चित्तोत्थित शृंगार दे गया

हर्षोत्सव में मूर्त्त प्रेम पुलकित रे कितना
हिम-शोभित हेमन्त-मुकुल-मुख कोमल जितना
छाती पर जलनेवाली पीयूषी बाती—
देख-देख कर, प्राणदेवता ! मैं अँगराती

मिला स्वप्न-सर्वस्व, मातृ-श्री अंग-अंग में
प्राण, किसे मैं कहूँ कि मैं हूँ किस तरंग में
लहर उठ रही मधुर-मधुर प्रिय अन्तरतर में
अमृत-रागिनी नृत्य कर रही सौरभ-स्वर में

कमल-कलश मे ज्वार, कहाँ रख दूँ यह पानी
गूँज रही मेरी वीणा मे शिशु की वाणी
हृदय-वृन्त से भिन्न नहीं रत्निल पुत्रोत्पल
नर-नारी संधिस्थल का प्रतिरूपित संबल

संतति-सुख के लिए उरोजों में आकर्षण
इसी सिद्धि-हित सृजनमयी दारा में यौवन
पुत्र-प्यास के लिए वासना पख हिलाती—
अंग-अंग पर इन्द्रजाल-परिमल बिखराती

मेरे प्यार-दुलार ! हार में जीत तुम्हीं हो
प्राणपुंज की गुंजित जीवित प्रीत तुम्ही हो
क्षीर-सिन्धु से निकला छवि-नवनीत तुम्हीं हो
इच्छाओं से उदित प्रभात पुनीत तुम्हीं हो

बीते अनगिन वर्ष, बाण-मन किंचित चिन्तित
दृष्टि प्रबल सम्राट्-द्वार पर अन्तर-द्रोहित
वधू-बन्धु कविवर मयूर ने पत्री दी है
किसी दुष्ट ने नृप से मेरी चुगली की है

सखा कृष्णवर्द्धन ने कुछ भी लिखा नहीं क्यों ?
बोली राजमुकुट से मैत्री-शिखा नहीं क्यों ?
सच है, सोने में सुगंध होती न कभी भी
मणि-मण्डित आँखें पर-हित रोतीं न कभी भी

पाषाणी प्रासाद पर्ण-गृह को न समझता
क्षीण सीकरों पर ज्यों पारावार विहँसता
कनक-कमल पर रेणु-भारती कब गाएगी ?
हे मनुष्यते ! मातृ-चन्द्रिका कब छाएगी ?

पर, सम्राट् हर्षवर्द्धन मंजुल कृपाङ्ग भी
राजनीति-साहित्य-समन्वित भू-शशाक भी
युग-विचार-स्वर-संधि-पत्र के वे हस्ताक्षर
मानवीय सामासिक छन्दों के मित्राक्षर

फिर क्यों ईर्ष्या की आँधी उठ रही गगन में ?
कौन क्रूर वायस विष-कूजित मुकुटित मन में ?
काव्य-शत्रु ! बाणारुण में भी ज्योति-नाद है
शब्दकोश में स्वयं भारती का प्रसाद है

ऐसा मत समझो कि शोण में ज्वार नहीं है—
गीतों के कर में वीरत्व-कटार नहीं है
देखा है इन्द्रित ऐरावत-चक्रवात भी
आत्म-शृंग पर झरे अनेकों तम-प्रपात भी

सावधान अप्रकट कीर्त्ति-खल ! उरग न बनना
अग्नि और विद्युत्-परिपूरित शिव की रचना
अतुल साधना का निर्णायक काल अकेला
आएगी विश्वाभिषेक की मंगल वेला

विक्रम की साहित्य-चेतना नहीं देश में
छुपा हुआ है बक भी उज्ज्वल हंस वेश में
शुभ्र कंकड़ी क्या मोती भी हो सकती है ?
प्रतिभा-विभा तिमिर में भी क्या खो सकती है ?

बोले बाण—"उसे सत्वर गृह में ले आओ
सखा-दूत के सम्मुख सादर शीश झुकाओ"
चन्द्रसेन ! आहार-योजना करो यथोचित
सर्व प्रथम तुम करो कष्ट-आभार प्रदर्शित

उत्सुक बाणभट्ट ने पूछा, कृष्ण कुशल तो ?
सम्प्रति वे सुखमय स्थाण्वीश्वर में अविरल तो ?
झुक कर "हाँ" कह, दीर्घाध्वग सन्निकट विराजित
निपुण भृत्यु ने किया उसी क्षण मधुजल प्रेषित

वेणी-वन्धन खोल, कृष्ण-पत्री द्रुत अर्पित
आकुल दृग-मुख से सर-सर-सर शब्द उच्चरित
मौखिक वार्ता-श्रवण-पूर्व कोई न भवन में
केवल भट्ट और वाहक सम्वादित क्षण में

प्राण-मित्र-प्रतिरूपित दूत निवेदित सत्वर—
"बाण, किसी ने फेंक दिया अपयश का कंकड़
दुर्जन-मिथ्या भाषण से भूपति आशंकित
दंशित दृष्टिकोण से तेरी प्रतिभा निन्दित

और, मध्य में प्राण-मित्रता विकल खड़ी है
बाणभट्ट ! अनुशीलन की यह कौन घड़ी है ?
मैं न हर्ष का सेवक जो भय से अकुलाऊँ
क्यों जाऊँ, मैं क्यों जाऊँ, मैं क्यों, क्यों, जाऊँ ?

चाटुकार मैं नहीं, न कुछ भी लोभ कहीं है
जो स्वतंत्रता यहाँ मुझे, वह वहाँ नहीं है
मेरे गृह ने राजभवन को कभी न देखा
आश्रित कभी न रही किसी दिन जीवन-रेखा

मैं एकान्त विपिन का कोकिल गानेवाला
गरज-बरस कर स्वतः जलद मैं छानेवाला
राजकुलों ने मेरा क्या उपकार किया है ?
स्थाण्वीश्वरपति ने न कभी सत्कार किया है

फिर किसका भय करूँ ? मुक्त मैं कला-पुजारी
शोणभद्र-तट का मै भी सम्राट् भिखारी
वाणी का भिक्षाटन करता अपने घर में
स्वर्ग-निसर्ग छुपा है मेरे गुंजित स्वर में

वात्स्यायन-वंशी न राज्य-छाया में रहता
आत्म-स्रोत तो कनक-शिला पर कभी न बहता
बंधन का सम्मान कलंकित हो जाता है
ज्यों गुण अवगुण में मिल सब कुछ खो जाता है

वाणभट्ट ! पहचानो अपनी ज्योति-धार को
हवन-धूम-शोभित देखो निज ज्वलित द्वार को
तप है यहाँ, वहाँ केवल आनन्द-लहर है
पहचानो दृग ! दो डगरों में कौन डगर है ?

दोपारोपण के कलंक को भी न मिटाऊँ ?
मधुर मित्र-आमंत्रण को भी मैं ठुकराऊँ ?
नहीं - नहीं, मेरी मैथिली परीक्षा देगी
ज्योतिर्मय मस्तक पर अनलकिरीट धरेगी

शंकर हे ! प्राणों में अब प्रलयंकर-स्वर दो
भर दो, भर दो, स्वर में सागर-गर्जन भर दो
प्रिये मल्लिके ! मैं कल ही प्रस्थान करूँगा
शंकाकुल सम्राट्-प्राण मे किरण भरूँगा

मंगल मलयवायु-वेला में शुकी बोलती—
"उठो बाण, ऊषा प्राची-गृह-द्वार खोलती
त्यागो निद्रावरण, कक्ष से निकलो बाहर
ग्राम-युवतियाँ निकल चलीं ले-लेकर गागर"

होकर निवृत स्नान-पूजा से बाण प्रफुल्लित
मुकुर-समक्ष वधू के सँग सस्मित मुख बिम्बित
श्वेत दुकूल वस्त्रधारी कवि राकायित-सा
हंसलोचना-शान्त प्रतनु कुछ आत्म-चकित-सा

प्रास्थानिक सूत्रों-मंत्रों से सिक्त वदन यों
अश्वमेध-आरंभ-काल थी रघु का मन मन ज्यों
कर प्रदक्षिणा प्राऽङ्मुखी नैचिकी धेनु की,
झुक कर पूजा की कवि ने उडु-चरण-रेणु की

आशीर्वाद लिए आगत गुरुजन-परिजन से
किया ध्यान नक्षत्र-देवताओं का, मन से
गोवर-लिपित पवित्राङ्गन-कलशी-दर्शन कर
वार-वार सुन विजय-शंख का अति उच्चस्वर—

प्रीतिकूट से निकले कवि सबको प्रणाम कर
गूँज रहे ब्राह्मण-गण-मुख पर मंगल मृदु स्वर
मधुर मल्लिका उठा रही पति-चरण-धूल को
शिशु-कपोल पर सँजो रही निज नयन-फूल को

दीर्घाध्वग के संग जा रहे बाण विहँसते
जाने-पहचाने जन कहते—भट्ट ! नमस्ते,
धूप लगी तो चले तान कर छत्र पथिक यों
भाद्र-दुपहरी में विहंग घन-छाया में ज्यों

मल्लकूट लघु गाँव, चण्डिका-वन के आगे
दूत ! समीरण-संग-संग हम सत्वर भागे
ठहरो देवीस्थान यही है, वंदन कर लूँ
वृक्षाङ्कित शुचि मूर्त्ति नमित नयनों में भर लूँ

शोण और गंगा का सुन्दर सलिल-मिलन है
दो नदियों के मध्य भाग में चण्डी-वन है
लुक-झुक करता सूर्य, पल्लवों के वितान से
संध्या उतर रही स्वर्णिम दिनमणि-विमान से

मल्लकूट में मेरा मित्र जगत्पति रहता
पौराणिक सुर-कथा नाट्य-स्वर में वह कहता
वहीं आज विश्राम करेंगे सखा-सदन में
दूत ! अनगिनत मित्र मिले मेरे जीवन में

सुनो, मृदंगायित वन-जन के सहगायन-स्वर
बुद्ध-पूर्णिमा-पर्व मनाएँगे सब मिलकर
देखो सम्मुख, उसी गाँव का जगत, निवासी
शैशव से ही भ्रमणशील वह काव्य-विलासी

कृषि-क्रीड़ित परिवार चिर सुखी सब प्रकार है
देखो, वही जगत्पति का पाषाण-द्वार है
मौलश्री-चन्दन-अशोक-तरुपंक्ति खड़ी है
लता-वल्लरी खिली, खुली-सी हरी-भरी है

डूब रहा दिनकर, गंगा की झिलमिल धारा
उगने पर है अब संध्या का परिचित तारा
श्यामारुण, पीताभ चमचमाती नौकाएँ
महाशून्य में स्तब्ध विहगमय सभी दिशाएँ

मुग्ध जगत्पति मित्रोचित आनन्द प्रदर्शित
प्राणों की पूर्णिमा फूट कर हर्षित-वर्षित
अर्द्ध रात्रि तक उसने कथा-प्रभा बिखराई
कोयल एक उड़ी कि दूसरी स्वर पर आई

श्वेत प्रात मे पथिको ने निज चरण बढ़ाए
मन के घन नयनों के नभ में आए, छाए
बात-बात में रवि पूरब से पश्चिम आया
सुरसरि-शुभ्र धार पर संध्यानिल लहराया

यष्टिग्रहक वन-गाँव आज का रैन-बसेरा
जागी धरती ज्योंही आया स्वर्ण सवेरा
उठा एक तूफान अचानक दोपहरी मे
मचा महाभारत भूतल पर सान्ध्य घड़ी में

काल-प्रभंजन ने विनाश के बाण चलाए
जीर्ण-शीर्ण सुविशाल वृक्ष के शिर चकराए
हुए धराशायी दुर्बल तरु शत प्रहार से
धीरे-धीरे निकले हम विकराल द्वार से

अजिरवती-तट पर मणितारा ग्राम यही है
इस यात्रा का लक्षित पूर्णविराम यही है
दूत! कहाँ मैं चलूँ? कुमार कहाँ है मेरा
वर्षों का बिछड़ा गुंजार कहाँ है मेरा?

प्रिय-दर्शन-हित दोनों दृग में आकुलताएँ
भाव-भुजाओं में आह्लादित विह्वलताएँ
सोमलता से आवृत अन्तर सांगीतिक-सा
श्वास-समीरण से अभिनन्दित प्राण-पताका

बोले कुमार! "हे अक्षि-प्रतीक्षित बन्धु विमल,
करना नृपेन्द्र-वार्ता सुमधुर, सविनय, अचपल
वे धीर, वीर, गंभीर, सुहृद, संयमी सफल
तेजोज्ज्वल महापुरुष-सम्मुख होना न विकल

"भूलना नहीं, सम्राट् निपुणतम नीतिवान
लोहित कृपाण में कृपा अकृपण यजनमान
मृदुता-कठोरता-संगम पर आरूढ़ शौर्य
विक्रमादित्य में आलोकित ज्यों महामौर्य

"कल्याण-कल्पनामयी सदा भूपाल-दृष्टि
रचती प्रबुद्ध प्रतिभा अन्तर-संकल्प-सृष्टि
पर यदा-कदा जलदाम्बर में उठती विद्युत्
झरते तुषार-कण, तब चन्द्रिका चमकती द्रुत

"चौंकना नहीं, यदि अग्नि उठे चन्द्रानन में
करता न दीर्घ गर्जन मृगेन्द्र वाणी-वन में
तुम समर-भूमि के नही, कला-भू के वासी
रखना सदैव संतुलित शब्द-संकुल-काशी

"श्री हर्षदेव सुविशाल हृदय के अधिनायक
उद्दाम ऊर्मियों के अभिराम मधुर गायक
विश्वास मुझे, उनका प्रसाद तुम पाओगे
पूजित होकर ही प्रीतिकूट अब जाओगे

"सम्प्रति वे किंचित खिन्न दस्यु-उत्पातों से
कुछ चिन्तित सीमा के अरि-झंझावातों से
पर रत्नदीप को देख मुदित होंगे लोचन
छाएँगे प्राण-कुंज में किरणों के गुंजन

"दीर्घाध्वग ! प्राण-सखा-सँग मण्डप तक जाना
नियमोचित संध्या-गोष्ठी-स्वीकृति ले आना
मैं आज गुप्त मंत्रणा-कुक्षि में जाऊँगा
अवकाश प्राप्त कर सत्वर स्वयं पधारूँगा

"मगधानुकूल हो अशन-प्रबन्ध मित्रवर-हित
साहित्यातिथि का शुचि स्वभाव प्राय: लज्जित
निशि में प्रमोद-गृह में प्रस्तुत हो गीतिपाश
वीणा-वाणी का हो विलासमय स्वरोल्लास

"इच्छित प्रिय यदि, तो अभी कला-मन्दिर जाओ
अभिनव आजन्तिक भित्ति-चित्र-पट दिखलाओ
यदि रुचे इन्हें तो ग्रंथागार दिखा देना
अनुकूल पोथियाँ अवलोकन-हित ला देना

"ताम्बूलित रुचि-परिपूरित प्रिय-श्री भट्ट बाण
रखना सेवार्थ सतर्कित अविरल सूक्ष्म ध्यान
वात्स्यायन-वंशपुत्र का सामन्तिक स्वभाव
उत्तराखण्ड तक अवगत सारस्वत प्रभाव"

अन्तरादेश कर व्यक्त, कृष्ण द्रुत प्रस्थानित
मैं भद्र षोडशी-सा सस्मित दृग-संकोचित
कोमल कुमार व्यवहार-कुशल ब्राह्मण-समान
मिथ्या आदर्श-रहित यौवन सद्गुण-प्रधान

मैं धन्य कृष्ण के मोहक मैत्री-बन्धन में
उठती सुगन्ध-श्री आह्लादित चन्दन-तन से
आकर्षित करती स्निग्ध सरलता जीवन को
भर लेता प्राणपाश में प्रेम मधुर मन को

ग्रीष्मिल शरीर विश्रामातुर अशनोपरान्त
निशि-निद्रित अलसित नयन अकिंचन शयन-भ्रान्त
अधखुली दृष्टि में हर्ष-मिलन की जिज्ञासा
सुधि-हंस-पंख पर उड़ती-सी झंकृत भाषा

सन्निकट सुनिश्चित अवधि हुई ज्योंहीं अवगत
अनुकूल आवरण-चयन-निमित्त हुए दृग रत
मधुपेय और ताम्बूल-पान से मिली स्फूर्त्ति
राज्योचित वस्त्रावृत तन दर्पण-सुरुचि-मूर्त्ति

दीर्घाध्वग-सँग मैं चला महानृप से मिलने
उत्सुकित वृन्त की कली लगी खुलने, खिलने
संवेग-श्वास-लास्यों का झंकृत आरोहण
ऊर्मिल उमंग-शृंगों पर उदित आत्म-यौवन

अनुशासित प्रतिहारी ने नमन किया झुक कर
सांकेतिक आशीर्वाद दिया मैंने रुक कर
फिर बढ़ा देखता बाह्य वस्तु सज्जित समस्त
दर्शन-परिदर्शन में भावुक दृग हुए व्यस्त

दौवारिक पारियात्र के सँग दीर्घा' आया
प्रतिहारि-प्रमुख ने मेरा प्रिय परिचय पाया
हस्तावाहन से बढ़े मन्द निर्भीक चरण
गजराज दर्पशाप को निरख अति चकित नयन

भुक्ताऽस्थानमण्डप-सम्मुख हर्षित हिलोर
मणिमुक्तामय सुर-संसद लख लोचन विभोर
ग्रीष्मानुकूल चन्द्रीय शीतलित स्फटिकासन
अलसित विनोद-मुद्रा में विमल नरेन्द्रानन

निर्वाक् अंगरक्षक तमालतरु के समान
दिशि-दिशि स्वर्णासन पर नृप-दल शोभायमान
पाटलोद्यान में ज्यों अनेक द्रुमपुष्प नमित
स्थाण्वीश्वरपति-सन्निकट विशिष्ट अतिथि प्रमुदित

चामर-सुग्राहिणी प्रतिहारिणियाँ अनिललयी
सर्वत्र भाव-भंगिमा शान्त सौम्या विनयी
मालवकुमार के संग सरस बादल-विलास
दाड़िम-दन्तों पर धूप-छाँह-सम शिष्ट हास

मणिपादपीठ पर हर्ष-वाम शुचि चरण दीप्त
ज्यों पद्मपत्र पर ब्रह्म-अंश नव सृजन-लिप्त
फेनिल कटि-वसन, सुप्रच्छदपट-धारी नरेश
ज्यो पूर्ण चन्द्र-सम्मुख सुहंस-हिमहास-देश

सम्राट् पुनः बोले कि "मिलन-कामना नहीं,
उन्मत्त बाण के हित उदात्त भावना नहीं
कह दो इससे, जब प्राप्त करे मेरा प्रसाद
तब दूँगा मैं उचितासन का गौरवाह्लाद"

भूपति-सुदृष्टि फिर गई उधर, इतना कह कर
मालवकुमार से बोले फिर कुछ चुप रह कर—
"वात्स्यायनवंशी युवा बाण भारी भुजंग
कलुषित कर्मों में केवल दूषित राग-रंग

सम्राट्-वचन से स्तब्ध सभासद-मुखमण्डल
मेरे शोणित में कौंध उठे द्रुत विद्युत्-दल
यौवन-समुद्र में मचा आन्तरिक कोलाहल
संयमित चित्त की धरा हुई चंचल-चंचल

विप्रोचित स्पष्टीकरण व्यक्त कर शर-स्वर से
पूछने लगा कुछ प्रश्न स्वयं अन्तरतर से
द्रुत स्वेद-वारि को पोंछ पीत प्रच्छदपट से
लोचन को मुक्त किया कुंचित कुन्तल-लट से

स्नेहिल दृग से सम्राट देखने लगे रूप
मैं खड़ा रहा सम्मुख, बनकर आश्चर्य-स्तूप
बोले वे—"हमने ऐसा ही तो सुना सदा,
वात्स्यायन-ज्ञान-गगन के तुम इत्वर-झंझा"

उत्तर में मैंने कहा—"देव ! दिन आएगा
मिथ्या भ्रम-निशि का भेद स्वयं खुल जाएगा
लौटूँगा अब मैं प्रीतिकूट लेकर प्रसाद
साधना कभी करती न व्यर्थ वाणी-विवाद"

सम्राट् मौन हो गए और मैं रहा खड़ा
गर्वित किरीट-आलोक नहीं मुझ पर बिखरा
वैभव के बल ने किया, हृदय का तिरस्कार
नृप-प्रथम मिलन मे मिला अयश का पुरस्कार

अभिशापों को यौवन वरदान बना सकता
तम की सुगंध से अनुभव गान बना सकता
निर्झरी बहेगी स्वयं तिरस्कृत गिरि-पथ से
निकलेगा रवि शंकान्धकार-भेदित रथ से

साहित्य-द्वार पर सुरपति को आना होगा
आरती-अर्घ्य पूजार्थ कभी लाना होगा
झुकना होगा साधना-सत्य पर जन-मन को
देखना पड़ेगा शब्द-तपस्या-कानन को

कवि होकर भी कवि को न हर्ष ने पहचाना
शासन के अस्थायी गौरव को ही जाना
सभ्यता सुसंस्कृत होती हृदय-मधुरता से
मनुजत्व दिव्य होता मस्तिष्क-प्रखरता से

मैं भिक्षाटन के लिए कदापि न आया था
नृप-दर्शन-हित भी नही अभी अकुलाया था
प्रिय प्राण-सखा ने मुझे बुलाया साधिकार
आमंत्रण पाकर ही आया मैं प्रथम वार

मणि-मुकुटाम्बर में उगा कि द्रुत हो गया अस्त
दंभी दुराव में डूबी आकांक्षा समस्त
अस्तित्व गरजता रहा घृणा के मरु-वन में
आँसू अकुलाते रहे अनल-नेत्राञ्जन में

राज्यासन पर खिलते न कदाचित काव्य-कमल
हीरक-नगश्रृंगों पर दुर्लभ शुचि वाणी-जल
कंचन-घाटी में मुक्त मेघ का चिर अभाव
प्रभुता-मरु-नद में तिर न सकेगी हृदय-नाव

लोहित प्राणों को वना सका यदि मृदुल मोम,
सूरज में यदि मिल सका सुधा से सिक्त सोम
होगा जीवन चरितार्थ वाण का, पृथ्वी पर
विजयी होगा कल्पना-कला-ज्योत्स्ना-निर्झर

नव द्वन्द्व-रात्रि में दुखित कृष्ण मिलने आए
संतप्त श्वास के पवन प्राण में अकुलाए
पर अट्टहास ने चीर दिया चिन्ता-वितान
उड़ चला गगन में वाणी का पुष्पक विमान

पर कैसे समझूँ, प्राण-नयन में पीर नहीं
उर-शतदल पर सम्राट् हर्ष-तूणीर नहीं
मित्रता-अश्रु ने चूक-क्षमा मुझ से माँगी
श्रद्धानुरक्त मानवता की करुणा जागी

ऐसे गृह का मै अतिथि जहाँ अपमान, स्नेह
संगम पर स्थिर मधु-कटु-मिश्रित दृढ़ तरुण देह
शशि की शीतलता इधर, उधर मार्त्तण्ड-ज्वाल
आनन्द और दुखपूर्ण आज का कठिन काल

पतझर में भी मैं और वसन्त-दुकूलों में
शूलों में भी मै और स्वप्न के फूलों में
मैं यहाँ रहूँ या वहाँ रहूँ, मै कहाँ रहूँ
अस्तित्त्व न भूलूँ अपना चाहे जहाँ रहूँ

मैंने कुमार से कहा, "मित्र ! मत हो उदास,
हो सका न अब तक कहीं, किसी दिन मैं निराश
सौभाग्य एक दिन चरण चूमने आएगा
जब शिल्प-शिखर पर चन्द्र-केतु लहराएगा

"मत जाओ मेरे मित्र, बन्धु से कुछ कहने
तुम मुझे स्वत्व-उन्मुक्त धार पर दो बहने
साधना देवता को भी स्वयं बुला लेती—
पाषाण-पुरुष को भी चुपचाप रुला देती

"मेरे कुटुम्ब भी रहते हैं स्थाण्वीश्वर मे
मैं वास करूँगा कुछ दिन उनके ही घर में
दिव्यता एक दिन उतरेगी अभिलाषा पर
सम्राट् झुकेंगे बाणभट्ट की भाषा पर

"कल ही प्रातः प्रस्थान यहाँ से कर दूँगा
संकुल स्वप्नों को अविरल अभिनव स्वर दूँगा
साकार स्वर्ग का सृजन करूँगा सर्वप्रथम
नव काव्य-ब्रह्म संकलन कर रहा सृष्टि-नियम"

आषाढ़ उमड़ आया, बादल-दल सभी ओर
विद्युत्-सुधि-सज्जित सुखद, सरस पावस-हिलोर
साधना-लीन मेरी तन्मय मुद्रा नवीन
उड्डीन कल्पनाएँ मानस-मसि के अधीन

संध्या-गोष्ठी में सिद्ध रसिक-सम्मिलन-पर्व
'कादम्बरि' के चित्रों पर किसको नहीं गर्व?
सम्राट् चमत्कृत हुए किसी के इंगित से
विस्मय-विभोर वे स्यात् भावना विस्तृत से

श्यामल श्रावण में राज्य-सचिव मिलने आए
विद्युत् के बोलों से वे किंचित् सकुचाए—
"आएगा, वह भी समय एक दिन आएगा
जब राजमुकुट से काव्य श्रेष्ठ कहलाएगा

कज्जल-कज्जल बादल की वेला बीत गई
मेरी कविता साहित्य-समर में जीत गई
वार्षिक शरदुत्सव आज सरस्वति के तट पर
आए कुमार ही आमंत्रण देने घर पर

जाते ही देखा, स्वयं हर्ष ही सभाध्यक्ष
कृष्णाग्रह से आसीन हुआ मैं नृप-समक्ष
स्नेहिल सुदृष्टि से देख-देख वे मुस्काए
अधरों पर किंचित्, विम्वित भाव उभर आए

जब अर्द्ध निशा रह गई शेष संगीतमयी,
पुष्पालंकृत मैं हुआ विपुल वाणी-विजयी
"जीवेम् शतम् शरद:" संभाषण किया सुखद
वार्ता सुनकर सम्राट् हुए उर से गद्‌गद्

दर्शन के गिरि से दिया उन्हें जब काव्य-चन्द्र,
मुस्कुरा उठे नभ-पथ में ही वे मन्द-मन्द
रस-सागर पर जब किया तुरत नौका-विहार
अर्पित कर दिया उन्होंने अपना रत्नहार

जयकार हुए जब बार-बार लख हर्ष-ज्वार
दे दिया कृष्ण को साहित्यिक मणि-पुरस्कार
आकाश प्रफुल्ल हुआ ज्योत्स्ना का पर पसार
मेरे प्राणों पर हरसिंगार ही हरसिंगार

साधना सफल-सी हुई नृपति जब गृह आए
उस दिन नयनों में शुभ्र शरद्-घन अकुलाए
स्नेहालिगन से खुले, खिले विधु-पुष्प-हृदय
हो गई पराजय में परिणत साहित्य-विजय

रथ पर बैठा कर हर्ष ले गए स्वयं वहाँ
था बाणभट्ट अपमान-गरल पी गया जहाँ
मैं मगधपुत्र अब इन्द्रालय में रहता हूँ
हिमगिरि पर चढ़ कर नृप को सब कुछ कहता हूँ

द्वादश सर्ग

एक दिन आकाश-जलद-तुरंग पर
सूर्य-सेनापति कहीं था जा रहा
घटा-रथ से उतर कर द्युति-देवता
नव बलाका-हार था पहना रहा

बाण उस आषाढ के प्रासाद पर
बादलों को छू रहे थे हाथ से,
कह रहे थे कृष्णवर्द्धन पथ-कथा
महातेजस्वी सफल सम्राट् की

हर्ष की दिग्विजय की आख्यायिका
गूँजती थी साँस की झंकार में
नयन-पट पर चित्र लेकर थी खड़ी
काव्य की करुणा अशनि-कल्लोलिनी

कल्पना उतरी उसी क्षण प्राण पर
ध्यान मे इतिहास आकर रुक गया
बाण ने देखा कि युग चिल्ला रहा
शब्द-भिक्षा के लिए श्रीकंठ में

किन्तु दुविधा में पड़ी थी चेतना
मुक्ति का साहित्य था कुछ कह रहा
वत्सवंशी-रक्त में कुछ हवन का
उठा रहा धुआँ मन के मंत्र से

वाण बोले : कृष्ण, तुम कर दो क्षमा,
लिख सकूँगा प्रिय, न हर्ष-चरित्र में
पूर्ण करने दो अभी कादम्बरी
साँस चलती है इसी में कला की

मुक्त पंछी हूँ, विचरने दो मुझे,
पंख को बाँधो न कंचन-डोर से
केलि करने दो मुझे आनन्द में
अन्यथा मैं छोड़ दूँगा स्वर्ग को

द्रव्य के हित मैं यहाँ आया नही
वाण भूखा भी नहीं सम्मान का
सृष्टि यदि इच्छित कला की, कर सका,
स्वयं लोटेगी अमरता चरण पर

तुम अकारण मित्र हो मेरे रसिक,
और, प्रिय सम्राट् भी कवि-हृदय हैं
इस मधुर संयोग से मैं मुग्ध हूँ,
रुका हूँ इस हेतु ही प्रासाद में

प्रथम श्रोता सृजन का वह वन्धु है
जो बढ़ाता कल्पना-संवेग को
फूल को यदि वायु सहलाए नही,
क्यों खिले वह मधुर गंध निकाल कर?

विहग तो अनगिनत सौम्य निसर्ग में
देखता शशि को परन्तु चकोर ही
लिख रहा हूँ जो कथा मैं काव्य की,
हर्ष-श्रवणानन्द उसको प्राप्त है

पूर्ण श्रोता वहुत कम मिलते सखे,
जो उठा ले नयन से उर-चित्र को
देख ले कादम्बरी की छवि-छटा
रसिक ऐसे यहाँ कितने लोग है?

लोक-कवि मै नहीं, शिल्पी प्रखर हूँ
भाव-भाषा-रंग-नव अभिव्यक्ति का,
देख कर सब कुछ विलक्षण दृष्टि से
रच रहा साहित्य शाश्वत चित्र का

हो गए चुप कृष्ण, सुन कर वाण का—
आत्म-संभापण उदात्त सुकंठ से,
किन्तु वह तो जानते थे हृदय को
जो कि चिर विनयी सुकवि के पास था

एक दिन आकाश-जलद-समुद्र पर
चाँद की नौका भँवर में फँस गई
पर, पवन-पतवार के अस्तित्त्व से
चाँदनी छिटकी अनन्त दिगन्त तक

स्वयं कवि-सम्राट् को कहना पड़ा
काव्य में इतिहास का भी स्थान है
डर रहे यदि तुम मुकुट-आघात से,
जोड़ दो अपनी कथा भी गर्व से

और, तब आषाढ़ के प्रासाद पर
हुआ स्वर्ण प्रभात नव इतिहास का,
कृष्णवर्द्धन ने कहा कवि वाण से,
हो गया मैं भी अमर साहित्य में

प्रथम दो उच्छ्वास में अंकित हुई
अवतरण-तप-कथा कवि के वंश की,
आत्म-इंगित भी किया मृदु बाण ने,
किन्तु अन्तर-ग्रंथ ओझल ही रहा

एक दिन वर्षान्ति-बादल-रेत पर
चन्द्रदीपक जल रहा था व्योम में
कास-वन में कमलवदना शरद्-श्री
पढ़ रही थी हर्ष की आख्यायिका——

पौरुष-अम्बुधि में निरख ऐक्ट-कुंठा का शव
पश्चिमाकाश से हूण-गृध्रदल उतरे नव
उत्तरापंथ में यवनाक्रमण हुए जब-जब
भारत-कृपाण से रुधिर-धार निकली तब-तब

वंदी न हिमालय हुआ, शिव-शिखर गिरा नहीं
आक्षोद-सरोवर में विदेश-विधु तिरा नहीं
भारती पहनती रही अनवरत हेम-हार
भू-मानस में अवतीर्ण बीजवर्षी विचार

गान्धार-धरा पर पुनः प्रबल रिपु-रण-गर्जन
भूपेश प्रभाकरवर्द्धन-तन में क्रोधित मन
वह हूणहरिणकेसरी विपुल सेना-समक्ष—
देखने लगे निज ज्येष्ठ पुत्र का लौह-वक्ष

युवराज राज्यवर्द्धन का आज कवच-धारण
पद-चतुर चतुर्दिक चारण का रण-उच्चारण
जयमंत्र-सिक्त उन्नत ललाट पर आर्य-तिलक
रक्ताभ नयन में भद्रभाव का विप्र-यमक

अरि-दमन-हेतु सेना-प्रयाण का प्रखर काल
सद्यःदर्शित सूर्याङ्गों पर घन-तिमिर-व्याल
ऊषा-पार्वती विलीन दीप्त शिव में तुरन्त
क्रमशः गुंजित उत्ताल रुद्र-रव से दिगन्त

निज युग्म पुत्र के मध्य प्रभाकर महाराज
भ्रू-लक्ष्यस्थल पर पाण्डुवर्ण हूणेश-बाज
पाषाण-पाणि रख राज्य'-स्कंध पर, यही कहा :
गान्धार-सिन्धुनद ऋचा-भूमि पर सदा वहा

—पहनाना महाकाल को प्रिय, खल-मुण्डमाल
करना शोणित से भीम-हस्ततल लाल-लाल
कर यवन-कंस-विध्वंस क्षिप्र विद्युत्-शर से
जाने मत देना जीवित झंझा को घर से

—तुम सिंहपुरुष भारत के, रखना सदा ध्यान
सीमा-स्वतंत्रता-रक्षा-हित कर में कृपाण
अनुभवी मंत्रिगण, स्वामि-भक्त सामन्त वीर—
जा रहे संग, होना मत विचलित कभी धीर !

कम्पित प्रभात में इस पड़ाव से चले। दूर
देखते रहे वन-दृश्यों को शर-निपुण शूर
रजताभ्र हिमालय शशि-कपास-सा दृग-विस्तृत
स्वर्गीय गंधमादन नटेश-ताण्डव-अनुकृत

चित्रित कुमारसंभव हिम-हर्षित शिखरों पर
कवि कालिदास मुखरित लोचन की लहरों पर
गुंजित तुषार के श्वेत श्लोक छवि-छन्दों में
आनन्द-मग्न शिव-सर्ग विशुभ्र अलिन्दों में

भारत के स्वर्ग-किरीट! शैलपति! नमस्कार
अर्पित सुदक्षिणी सिन्धुमंत्र - ध्वनि - उर्मि - हार
गौरव-गिरि! चिर गर्वित तुमसे भारतवासी
सुर-सरित-तत्त्व के हे हिमेश! तुम नभ-काशी

निर्जन अरण्य में रुके सभी अश्वारोही
सुन अश्व-घोष, भागी मृग-श्रेणी दृग-मोही
आखेट-कुशल श्वानों के सुन स्वर झॉव-झॉव
कौए करने लग गए द्रुमों पर कॉव-कॉव

उड़-उड़ कर आए वन-कपोत, शुक, पिक, मयूर
भालू-बन्दर-वाराह-व्याघ्र-शिशु दूर-दूर
चूँ-चूँ-चूँ-चूँ चीं-चीं-चीं-चीं चिन-चिन कलरव
बैठते फूल-फल-लदे वृक्ष पर खग नव-नव

वन इतना सघन कि व्याप्त चतुर्दिक अंधकार
पल्लव-वितान पर मन्द दिवाकर-बिम्ब-द्वार
दूरागत स्यात् किरात-युद्ध-सम कोलाहल
सागर-तीरों पर ज्यों निषाद का कल-बल-छल

नूतन दिन में मृगयार्थ सदल निकले कुमार
तूणीर-तीर में चुभी सफलता प्रथम बार
नित एक पक्ष तक हुए लक्ष्य पर शर-प्रहार
मृग-मॉस भूनते भक्षण-हित नित घुड़सबार

हड्डियाँ चबाते आँख मूँद कर क्षुधित श्वान
देखते निरामिष अश्व-हस्ति बल-वीर्यवान
कुछ प्रौढ़ युवक तित्तिर-वटेर पर भी टूटे
रसमयी प्रकृति का असुर-स्वाद कैसे छूटे!

श्रीहर्ष-प्राण में श्रमण-अहिंसा की हिलोर
भू की सहिष्णु भावना-भव्यता का झकोर
दृग में प्रांजल मानवता की निर्मल भाषा
बिम्बित कलिंग-क्रन्दित अशोक-निष्ठा-आशा

फिर तुरत वीर-चेतना, संतुलित शक्ति-द्रोह
था मौर्य-पतन का कारण भी वैराग्य-मोह
फिर भी, न धर्म से रहे निरंकुश नृप-जनपद
कर्मों में विचरे विष्णु-बुद्धि की प्रखर शरद्

अन्तिम निशीथ में अशुभ स्वप्न देखा उस दिन
दावानल में जल गया बाघ, झुलसी बाघिन
दो शावक-सुत देखते रहे वन-अग्निदाह
मन-ही-मन करते रहे विमूर्च्छित ओह-आह

चिन्तित प्रभात-मृगया में किंचित लगा न मन
गज के आसन पर करुण दृश्य का हुआ स्मरण
—चढ़ गया वृक्ष पर सर-सर-सर मांसल व्याधा
फल-भक्षित वानर-दल ने दी उच्छल बाधा

—फिर भी फुनगी के निकट नीड़ तक पहुँचा वह
कुछ करुण-करुण दारुण मन सुन चूँ-चूँ-चह-चह
दो दिन के पंख-हीन शावक छूते ही अचल-विकल
अधफुटे नयन, अंकुरित अरुण रोएं कोमल

श्रीहर्ष शिविर में शीघ्र लौट आए उदास
शीतलपाटी पर बैठे त्रिफला-विटप-पास
उपधानाश्रित शिर पर दुपहर की धूप-छाँह
दोनों लोचन से भिड़ी, मुड़ी मखमली बाँह

अलसित अधखुली दृष्टि पपनी से अधिक दूर
उस शिला-खण्ड पर बारहसिंहा-सँग मयूर
झरते कुछ शाल-पत्र नीरवता के तन पर
टपके जैसे हिमकण तपसी ऋषि के मन पर

ज्यों दो पर्वत के बीच उमड़ आते बादल
दिखलाई पड़ा कुरंगक दीर्घाध्वग श्यामल
सम्राट्-लेखहारक वह पहुँचा हर्ष-निकट
पहले प्रणाम, तब प्रेपित सकरुण पत्री झट

पढ़ के पूछा कि कुरंगक! पितु को व्याधि कौन?
कह 'महा विपम ज्वर' आगन्तुक हो गया मौन
तब दुखित हर्ष-आज्ञा से द्रुत सैनिक-प्रयाण
मग में अनेक अपशकुन देख, कुछ मलिन प्राण

भोजन-हित सविनय भंडि-प्रार्थना हुई व्यर्थ
श्रीहर्ष सतत यात्रा-पथ में सक्षम समर्थ
चलते-चलते, चलते-चलते छुप गई रात
शिथिलित गति-गर्जित अश्व-सिन्धु पर हुआ प्रात

अश्वाङ्ग-उपाङ्ग निरन्तरता से अति स्वेदित
हाँफती श्वास हिः हिः हिः हूः हुः हुः रन्ध्रित
गतिशील टाप त्रा-त्रा-त्रा-त्रा फिर त्राक्-त्राक्
पंथी-समूह, शिशु, ग्रामवधू, वृद्धा अवाक्

आते-आते आए समस्त जन स्थाण्वीश्वर
करुणा-कुहरी में कुहक-हीन निस्तेज नगर
ज्यों शिशिर-घन-पवन से निर्धन-तन में ठिठुरन
त्यों रुद्ध राजपथ पर प्रहरी-स्वर में कम्पन

अकुलाए हर्ष अधीर देखकर दुर्ग-द्वार
क्षत-विक्षत वातावरण कि ज्यों दिवसान्धकार
पूछा आते वैद्य-पुत्र से अश्व से उतर
उत्तर से आकुल प्राण, अग्रसर पग सत्वर

निस्तब्ध खगवाहक प्रहरी-निःशब्द नमन
प्रारंभ दान-दक्षिणा, यज्ञाहुति होमार्पण
संयमी विप्र संहितामंत्र-जप मे तन्मय
मंदिर में रुद्र-महामायूरी-पाठ, अभय

प्राङ्गन में नृपगण पूछ रहे क्षण-क्षण लक्षण
चुप-चुप कानों में कह जाते अधिकारी जन
अति दुखित हृदय में धर्म-द्रोह-विक्षोभ-लहर
संतुलन-हीन नैराश्य दार्शनिकता के स्वर

सम्राट्-निकट चिन्तित सुतका सकरुण प्रवेश
कम्पित प्रदीप-सा धैर्य-ध्वस्त मणि-मुख-प्रदेश
कलि-काल-आगमन-पूर्व परीक्षित ज्यों शंकित
त्यों तमा-भ्रूण में निशि-अनित्य-फण अवलुंठित

शर-शय्या पर ज्यों महाभीष्म-आदेश सवल,
अस्तमित प्रभाकर-सजल नयन में स्नेहोत्पल
भारत के अधिकृत भार-संवहन की पुकार
संक्षिप्त प्राक्कथन में विलीन ज्यों सूत्रधार

आज्ञा से अनशन-भंग, अवनिपति-पथ्य-ग्रहण
सेवा में तत्पर हर्ष, हस्त में जनक-चरण
दाहज्वर किंचित कम, क्रमशः ओषधि-प्रभाव
फिर मध्यरात्रि में रम्य रसायन से दुराव

स्वरभ्रान्त व्याधि-भ्रूक्षेप निरख स्तंभित कुमार
दयनीय भाल पर विकल पाणि-द्वय वार-वार
बीती घुघुआती-सी अटपटी अलर्क-निशा
उतरे ऊपर से हर्ष, मुड़ गए पूर्व दिशा

मूर्च्छित लक्ष्मण लख ज्यों कपिदल, त्यों वैद्य-व्यूह
चिन्ताग्नि-ज्वलित श्री-रहित राज-नारी-समूह
सम्राज्ञी यशोवती-तन पर अव सती-वसन
अन्तःपुर में परि-व्याप्त मौन मारुत-क्रन्दन

मन्दिर-पथ में ही हुए हर्ष शिशु-सा विह्वल
झरझरा उठे उमड़े नयनों के नीरद-दल
चरणों पर गिर कर कहा कि मा ! मैं भाग्यहीन
ममता-विहीन मत करो, पुत्र मैं दुखी दीन

शोकित माता ने किया ग्राम-वनिता-विलाप
आँसू में व्यक्त अधीर अविधवा-मन-प्रताप
सुत-पग पर झुक, बोली : मत कर इच्छा-विरोध
मेरे प्राणों में स्वामि-भक्ति का भस्म-बोध

निष्प्राण विटप-सा हर्ष अचल, चुप, दुखाक्रान्त
ज्यों मृत्यु-दण्ड से पूर्व निरपराधी प्रशान्त
दारुण कोलाहल एक बिन्दु दृग-जल में स्थिर
मंथर गति से वे मन्द-मन्द आए मन्दिर

पूछा कि देव ! तुम शिलामात्र या प्राणवान ?
धर्मास्था से संभव मानव-दुख-समाधान?
लग गई सूर्य में आग, चन्द्रिका धधक रही
डूबना चाहती विपद-प्रलय में बुद्धि-मही

एकाकी आकुल हर्ष कर रहे आर्त्तनाद
अत्यन्त करुण, अत्यन्त जटिल भीषण विषाद
किसकी भावुकता सती-प्रथा में धर्म-व्याप्त ?
जल जाने से ही कैसे होगी मुक्ति प्राप्त ?

सम्राट् प्रभाकरवर्द्धन के सो गए प्राण
सम्पूर्ण नगर पर महाशोक का तम-वितान
क्रन्दन-कोलाहल में सद्गुण-संस्मरण करुण
अनगिन, असंख्य निष्कपट नेत्रदल सजल अरुण

मरणोपरान्त ही मानव-मंजुल मूल्याङ्कन
सद्भाव, प्रेम, सेवा का युग-युग तक गुंजन
वेदना-ज्वार में जन-अर्णव आकुल अरुद्ध
गर्दभ-पथ पर भौंकते संकुचित श्वान क्षुद्र

दुष्काल-दस्यु के रुद्र-क्रोध से स्तब्ध हर्ष
तैरता तिमिर में विपद-ग्रस्त पौरुष-विमर्श
अतिमोह-मत्स्य को निगल रहा दायित्व-ग्राह
पर पितृशोक से अन्तर में पीड़ा अथाह

अरथी कंधे पर रख, आकुल-व्याकुल कुमार
सामन्त, पुरोहित पौर, अधिकरण, जन अपार
पहुँचे सब सरस्वती-तट, रानी जली जहाँ
सुनता सतीत्त्व-संगीत विदुर-वट-वृक्ष वहाँ

हिन्दू-विधि से शव-शिबिका अगरु-चिता पर स्थिर
दुख-द्रवित हर्ष-कर से प्रज्ज्वलित अग्नि-मन्दिर
कितना दुर्लभ मानव-सुकर्म-संकुल शरीर
मिट जाने पर भी महापुरुष-हित नयन-नीर

नारी-शव नोंच-नोंच खाते ज्यों गृद्ध, श्वान
सुधि-पट पर अंकित कचर-मचर किचकिच प्रमाण
चाण्डाल चिराइन गंध सूँघते ज्यों चर्मर
कानों को कुतर रहे कतिपय चिचियाते स्वर

निःस्वप्न घृणित दृश्याम्बुधि-निशि-नौका डूबी
धूमिल अंगीठी ताप-ताप आँखें ऊबीं
हुरहुली उषा गँधकी कुहरी में यथा म्लान
हृपायन में संतप्त चेतना का विहान

सम्पूर्ण स्वर्ग-प्रासाद मलिन ज्यों विधवा-मुख
दिग्पथ उदास, दुर्भिक्ष-ग्रस्त ज्यों जन-गण-दुख
निष्प्राण राजमंदिर ज्यों जीवित पुरातत्त्व
निष्प्रभ अन्त:पुर : निरानन्द-यौवन-महत्व

निष्पत्र ठूँठ-सा मौन अचल परिजन-समूह
मन में उचाट का दाह, हृदय में हाह-हूह
निष्पन्द राजकुंजर विषादमय दर्पशात
साहसिक महावत-दृग से अविरल अश्रुपात

स्नानोपरान्त, सरि में मृतु पितु को अंजलि दे
निःछत्र दुकूलावृत कुमार पैदल लौटे
उपदेश-काव्य-सी साधु-संत की सुनी बात
ब्राह्मण-विधि से बीती अशौचमय दिवस-रात

भारत नद-नदियों को श्रद्धार्पित अस्थि-फूल
स्मृति-चिताचैत्य-विम्बिता सरस्वति ज्यों त्रिशूल
युवराज-प्रतीक्षा में कुमार-छवि कान्तिहीन
गिनते आगामी सुख के दिन ज्यों दुखी दीन

सागर पर लटका हुआ मेघ ज्यों पीता ; जल
चूते टपटप अधरों पर आँसू निकल-निकल
लेते लपेट सूँढ़ों में ज्यों गज विविध कमल
रख लेता मुख में हृदय-हिरण सुधि-दुर्वादल

श्रीहर्ष एक दिन प्रिय परिचन के संग मुदित
ज्यों हरित नग-शिखर-मध्य चतुर्थी चन्द्र उदित
पीले-पीले गेंदों पर ज्यों हेमन्त-भ्रमर
गुनगुन-गुनगुन करता निकला भीतर का स्वर

:गौतम-सम राज्यऽलक्ष्मी से हो रही घृणा
मेरे प्राणों में नहीं तनिक भी मणि-तृष्णा
हे हर्ष ! तुम्हीं अब करो राज्य-संभार-ग्रहण
वन-आश्रम में केन्द्रित मेरा शोकाकुल मन

इतना कह, किया सभा में प्रभुता-खंग-त्याग
उत्पन्न पारदर्शी उर में वल्कल-विराग
अशरीरी इच्छा में आत्मा-अनुनय अदोष
काया में माया-रहित किरणमय कमल-कोश

करुणावतीर्ण से त्वरित हर्ष-अन्तर विदीर्ण
श्रीकंठ-कीर्ति-साम्राज्य-पंथ कंटकाकीर्ण
अव्यक्त शब्द-सागर पर झंझावात मौन
वैराग्य-विभा में दृढ़ स्वदेश-कामना गौण

इतने में, राज्यश्री का विह्वल संवादक
अनुजा-पति-हत्या से उर-पीड़ा मर्मान्तक
ग्रह वर्मा का हत्यारा अरि मालवाधीश ?
वन-गमन-पूर्व काटूँगा उसका कपट-शीश

—वंदीगृह में अब बहन ? ओह, अति अनाचार
सम्राट्-मृत्यु से कान्यकुब्ज-नृप पर प्रहार ?
आएगा मालवराज दुरात्मा स्थाण्वीश्वर ?
हे हर्ष ! उठ रही शोणित में प्रतिशोध-लहर

—तुम राज्य सम्हालो, और करूँ मैं शत्रु-दमन
कैसी विडम्वना ? सिंह-निकट कूदता हिरण
क्या सलिल-सर्प टीपेगा सक्षम गरुड़-ग्रीव ?
भनभना सकेगा कबतक पथ में मसक-जीव ?

तत्क्षण आयुध-सेना-प्रयाण-आदेश अटल
लख वीर बन्धु का अंग-भंग, श्रीहर्ष विकल
अभिमन्यु-अतुल समराग्रह पग पर शिर धर कर;
भाई को भाई का समुचित सत्वर उत्तर—

मृग-वध-निमित्त लज्जास्पद सिहों का दल-बल
तृण-दाह-हेतु पर्याप्त मात्र अतिसूक्ष्म अनल
आ रहा पराक्रम-काल सकल भूतल-जय-हित
लाने दो अभी द्रोपदी-इच्छा को शोणित

ज्यों इन्द्रप्रस्थ खाण्डववन-दानव-आशंकित
सक्रोध हर्ष कृष्णीय चक्र-वल्ल-सा दोलित
रवि पर ज्यों राहु झपटता, मन पर तिमिर-रक्त
दृग-नभ में उल्कापात, उग्र अन्धड़ सशक्त

भीपण निशि-वर्पा से जन-पथ ज्यों जलाक्रान्त
दारुण उत्पात-प्रपात-स्वप्न से हर्प क्लान्त
लाक्षागृह-गंधित माधव-सा संदेहित मन
दूरागत लोहित ज्वाल-रन्ध्र से क्रोधित तन

वाह्याऽस्थानमंडप में रण-विचार विनिमय
सम्राट् युवक श्री हर्ष रुद्र रघु-सा निर्भय
हिमगिरि से सागर तक भारत, भौगोलिक मत
प्राचीन शास्त्र के दृढ़ प्रमाण से सब अवगत

उस क्षण ही भ्राता-कृपापात्र कुन्तलागमन,
संवाद कि मालव-विजयी वीर कृष्णवर्द्धन
पर, महाराज ! अव किस मुँह से मै कहूँ बात
पृथ्वी पर जीवित नहीं आपके पूज्य तात !

—जय के पश्चात् गौड़-भूपति से अभिनन्दन
एकान्त भवन में असि-प्रहार से खण्डित तन
निःशस्त्र हस्त से भी अरि-मुख से रुधिरपात
पर अन्य सैन्य तत्क्षण जघन्य राक्षसाघात

सम्राट् हर्ष-शिव-मुख पर भैरव-क्रोध-ज्वाल
ज्यों प्रलय-पूर्व ताण्डव का डिम-डिम रुद्र ताल
आग्नेय विष्णु-अम्वुधि मे ज्यों ब्रह्माण्ड-नाद
नरसिंह-हर्ष-अन्तर में विस्फोटित विषाद

कटु नील कंठ मे स्वर-त्रिशूल-लू-लपट-लास
तत्पर प्रण-परशुराम करने को गौड़-नाश
उर-अन्तराल में श्वासों का उत्थान-पतन
हुंकारपूर्ण प्रतिशोध-शिखर पर स्वर-यौवन

जीर्णायु-युवक सेनापति सिंहनाद अतुलित
भीमाकृति-मुख पर क्रोधारुण दृग-पथ गर्जित
भ्रू-श्वेत अग्नि-शर से अमोघ-प्रण-हस्ताक्षर
पर्वताकार उत्तुंग वदन में तेज प्रखर

सम्राट्-भाल पर उदित सिह का वीर-भाव
कौरव-विनाश-हित यथा सारथी-स्वर-प्रभाव
श्रीहर्ष-प्रतिज्ञा में समस्त भारत की जय
तबतक अविवाहित, जबतक विजय नही सचय

तब महासंधि विग्रहाधिकृत को निर्देशन :
प्रत्येक भूप को सत्वर राजपत्र-लेखन
स्वीकृत हो प्रभुसत्ताऽस्तित्व या रण महान
सम्राट् हर्षवर्द्धन-शासन-सेना-प्रयाण

युद्धोत्तेजित मंत्रणा-सभा जब हुई भंग
पौरुप-समुद्र में उठी प्राण-शोणित तरंग
भूपेश धवल-गृह ओर, पादुका मच-मच-मच
नयनों के सम्मुख समराभूषण लौह-कवच

द्वितीय दिवस श्रीस्कंदगुप्त का आवाहन
प्रतिहार मेखलक-द्वारा राजाज्ञा-प्रेषण
वह महाहस्तिपति मन्दिर में स्थिर ध्यानमग्न
आदेश-भाष्य से दैनिक पूजा हुई भग्न

टपकाता महाधिकार मुखाकृति से अजेय
आजानु लम्ब भुजदण्ड हिलाता अपरिमेय,
मांसल होठों पर लिए चण्डिका-मंत्राक्षर
आ रहा व्याघ्र-सा स्कंदगुप्त पैदल पथ पर

सम्राट्-नमन-पश्चात् दिग्विजय-वार्ता-क्रम
उद्धृत अतीतकालीन कठिनतम विक्रम-श्रम
गौरवमय गजसेना-सम्पादन शीघ्र सकल
श्रीकंठ-महाजनपद-जय-हित प्रस्तुत जन-बल

कुछ ही दिन मे संकल्प-स्वप्न-प्रारूप मूर्त्त
ज्योतिपी-दण्डयात्रा-सुयोग्य-सक्षम मुहूर्त्त
मंगल विधि से सम्पन्न समस्त शस्त्र-पूजन
अष्टादश द्वीपों पर प्रभुता-हित ईशार्चन

निकला विराट् सेना-समुद्र घनघोष-पूर्ण
भू पर असंख्य पग-तंत्र-यन्त्र-आघात घूर्ण
नांदीक, शंख , गुंजा, काहल, पटहादि-नाद
भारत की अतुल सैन्य-यात्रा यह निर्विवाद

सम्राट् हर्ष ज्यों प्रलय-जलद-रवि ज्योतिर्मय
इन्द्रान्तरिक्ष-नक्षत्रलोक मे अविरल जय
निर्बाधित गति से सरस्वती-तट पर पड़ाव
पद-महिमा के अनुकूल प्रदर्शित हाव-भाव

प्राग्ज्योतिषपुर के दूत हंसवेग आए
शरणागत शत उपहार देख नृप मुसकाए
पूर्वज ज्यों कामरूप-श्री चित्राङ्गदा-विजित
श्री हर्ष-महासत्तान्तर्गत फिर भू भूषित

प्रारंभ पुनः सेना-प्रयाण ज्यों झंझानिल
विश्राम-काल-संकेत, निरख रवि-छवि झिलमिल
प्रालेय क्रूर पगतल से ध्वस्त हरित खेती
क्षति-ग्रस्त कृषक-वधुएँ दृग-पलक मूँद लेतीं

सैनिक पड़ाव-सन्निकट ग्रामवासी क्लेशित
निष्ठुरादेश पर तन-मन-धन भय से अर्पित
लघु-लघु सामन्तों की सेवाएँ भी अकाम
पग-पग पर भक्तिपूर्ण कम्पित पावन प्रणाम

दूराभासित स्वर्गीय तात-सेना लख कर
लक्ष्मण-आशंका चित्रकुटी लोचन-पथ पर
पर स्वयं भंडि को देख हुए सम्राट् मुदित
तत्क्षण ही भ्रातृ-स्मरण से फिर उर-प्राण द्रवित

उस दिन पड़ाव पर भंडि-संग सकरुण वार्ता,
निरुपाय वहन राज्यश्री की असहाय कथा
अरि-पिंजर से छूटी सिहनी छिपी वन में
विन्ध्याचल का प्रवास-इंगित अन्तिम मन में

सुन सत्याङ्कित संवाद, हर्ष अति उत्तेजित
जानकी-हरण पर रुद्र राम से अधिक कुपित
अब सौंप भंडि पर युद्ध-भार, निकले नरेश
छोटी-सी सेना लेकर पहुँचे वन-प्रदेश

मस्तिष्क-संजयी-दृष्टि गौड़-रण-क्षेत्र-ओर
कौन्तेय हृदय में राज्यश्री-ममता-हिलोर
मन-संगम पर अन्तर्हित आभा आत्म-घटित
दिग्-ज्योति-ज्वार पर संग-संग शशि-भानु उदित

वन-मध्य ग्राम में ही पड़ाव, पथ संव्यागत
विन्ध्याचल पर अरुणागस्त्यारोहण-स्वागत
भारत की संधि-भूमि पर आर्य-द्रविड़-झुरमुट
प्रति-ध्वनित कपोती-कंठ घुटुर-घुट-घुटुर-घुट्ट

कृषि-कर्मलीन वन-जन से पालित गाय-बैल
खोंसते कान में सुग्गे का पर तरुण छैल
तीरों से करते वे सुपाच्य पशु का शिकार
बेचती जंगली फल बटोर वामा उदार

बंजर धरती को कोड़, खाद, मिट्टी में भर
जोतते खेत, चुनते तृण, बोते कण हलधर
काटते वृक्ष-शाखा, चीरते नित्य लकड़ी
पालते आर्य-कृषकों-सा भैंस-भेड़-बकरी

खर-पात-मृत्ति-गृह-चहुँदिशि स्थिर कंटक-टट्टी
फैली फल-फूलोंवाली हरीभरी लत्ती
श्यामा गृहिणी के गुँथे केश में श्वेत-फूल
अंजन-रंजनमय नम्र नयन में चरण-धूल

महुआसव-धौत धमनियों में माधुर्य-लहर
वन की राधाएँ सुनतीं माधव-वंशी-स्वर
कृष्णा किशोरियाँ वेणु-वनों में धेनु-संग
यौवन-कदम्ब-विम्बित मन-कालिन्दी-तरंग

महिषावलियों पर बैठ छैल छेड़ते तान
अज-अजिका पर फेंकते वाल-दल वेंत-वाण
कंकड़-प्रहार से काग डाकते डालों पर
उड़ जाती फुर्र-फुर्र चिड़िया शिशु-नट से डर

शबरी-कानन में स्नेह-सुजाता विन्ध्य-ग्राम
धूलों-फूलों से भरी भावना-छवि ललाम
निष्कपट आत्म-सेवा की बीती हिरण-रात
चढ़ता गिरि पर घन-भेड़-संग भेड़िया-प्रात

आई पुआल पर ईख चाभती कृष्ण छटा
मायूरी नभ में अंकित नव क्रिकटास-घटा
फिर जलद-महिप के पीछे दौड़ा पवन-श्वान
कौंधी विद्युत ज्यों असुर-हेतु दुर्गा-कृपाण

अनुजा-सुधिमुख-मणि देख दिवस के दर्पण में
अश्वारोही के संग हर्ष निकले वन में
अनिमेष अदिति-लोचन में ग्रामेयक ममता
आरण्यक स्नेहांजलि में जन-सहृदय-समता

थक गईं अक्षि, थक गए अश्व, पर मिली न 'श्री
सकरुण संध्याएँ ओझल हुईं ताम्रवर्णी
सूखे पत्तों पर ज्यों दरिद्र-परिवार-शयन
अंघ्रिप-अन्तश्छद् में निशि-निद्रित तपित नयन

निर्झरी-नीर पी-पीकर पाण्डव-क्षुधा शान्त
पांचाली-प्राण-व्यथा से जीवन अध्व-भ्रान्त
सीता-अन्वेषण में ज्यों दशरथ-पुत्र विकल
भीषण अटवी में प्रतिपल दारुण चित्त चपल

पौराणिक कथा-संधि में ज्यों नारद-प्रसंग
नैराश्य-तिमिर रह सका न मन में निस्तरंग
आटविक युवक शिव-शवर-आगमन हुआ अचिर
वंदन-अभिनन्दन वन्यभूमि पर रख कर शिर

सुन श्रान्त हर्ष से 'श्री-वीक्षण की जिज्ञासा,
निकली मुख से व्याकरणहीन उर की भाषा
द्रुत वीर शवर का द्रुम-पथ-दर्शन विनयशील
रविमण्डल के आगे-आगे ज्यों जलद नील

कट्फल पर ज्यों निश्शंक शुकों का सुरभि-पान
आशा-सुधि-सौरभ-संग-संग मन का प्रयाण
गिरि-घिरित ताल-अम्बुज-वन में ज्यों कलभ-लास,
भीतर ही भीतर नर्तित आशामय प्रकाश

पाषाण-खण्ड पर निद्रित ज्यों शश-बालवृन्द,
मकरन्द-लुब्ध मानस में मन-मारुत-मिलिन्द
नवजात कुक्कुटी कुटज-कोटरों में ज्यों चुप
तम-तनया संध्या-सी उत्सुकता-श्री लुकछुप

पीता ज्यों नीलगाय-शिशु क्षीर भल्ल-सम्मुख,
नीलांडज मृग-सुख में संतोप-धौत पथ-सुख
थुथनी से ज्यों सूअरी खोदती मृत्ति प्रचुर
लोचन निचोड़ते स्मृति-जम्भीरी रस सुमधुर

: राज्यश्री-परिणय का संस्मरणोल्लास अमित
मौखरि-वर ग्रहवर्मा-शोभायात्रा अतुलित
भारती-सात्वती-आरभटी-कैशिकी नृत्य
ताम्बूल-पुष्प-पटवासपूर्ण मधुमुग्ध भृत्य

: मंगल-विवाह-वेदी पर पितु का पुत्रि-दान
आर्योचित विप्र-पुरोहित को वैभव-प्रदान
गुरुकुल को स्थायी द्रव्यराशि, गोधन, सुवसन
शत योग्य याचकों में सुवर्ण-मुद्रा-वितरण

: स्नेही नयनों मे अनायास आँसू अधीर
पति-गृह-प्रस्थान-अवधि में झर-झर नमित नीर
भाई से बहन सुदूर, हृदय कम्पित थर-थर
अब कहाँ मिलेगा एक आत्म का अपना स्वर

: चरणों पर गिर कर रोईं जब, फट गए प्राण
अब भी आँखों में उस अतीत का जल-वितान
जीवन से यदि हट जाय मनुज का मधुर मोह
कैसा होगा संसार कुटिल उर-हीन ओह!

कलकल-खलखल स्वच्छन्द पहाड़ी झरना-जल
दुर्वादल पर मृदु मोर-वृत्त में शुक-पिक-दल
छन्दप्रवाह-सी मृगश्रेणी श्लेषालंकृत—
पुष्पिता सलिल-लिपि-धारा में सद्यः उद्धृत

कर वन्य-वारि से मलिन सूर्य-मुख प्रच्छालन
स्थाण्वीश्वरपति-इंगित से बढ़े तुरंग-चरण
पहुँचे सब, भिक्षु दिवाकर मित्र-कुटीर-निकट
सम्मुख पर्वत पर खड़ा एक अति विस्तृत वट

फल-फूल-पूर्ण ज्यों मुनि वशिष्ठ-आश्रम-वर्णन
जंगल में मंगलमय निसर्ग का चित्राङ्कन
जम्बू, कदम्ब, सल्लकी, वकुल, चम्पक, तमाल
कुरवक, प्रियंगु, मुचुकुन्द, लकुच, तरुशाल, ताल

शेफाली, रक्ताशोक, नमेरु, नागकेसर
जंबीर, जायफल, कर्णिकार, लतिकादि सुघड़
हिन्दोलित कदली-नारिकेल-शोभा अपार
खग-मृग-मानव-मुखरित बौद्धाश्रम समागार

अनुजा-भ्राता-सम्मिलन करुण-रस-सराबोर
उमड़ी चारों नयनों में संचित घटा घोर
अव्यक्त शोक के व्यक्त भाव निर्वाक् सदा
आई न कभी ऐसी अरालकेशी विपदा

नव तरुण कृष्णवर्द्धन इतने में आ धमका
मेघों में आकुल-व्याकुल एक वज्र चमका
तब महाश्रमण ने किया अनिश उपदेश-दान
संध्या में हुआ प्रविष्ट स्वर्ण शाब्दिक विहान

नूतन जीवन से निकली सहसा दिव्य किरण
प्राणों से याचित, आत्मा का काषाय वसन
मन-ही-मन भ्राता ने अनुजा का किया नमन
अबला राज्यश्री हुई आर्द्र आमरण श्रमण

कर अंजलिबद्ध प्रणाम मौन सम्राट् द्रवित
वैराग्य-वृन्त पर पुण्य-कली निस्तब्ध नमित
बस, एक बूँद आँसू लेकर लौटे नरेश
भूले कैसे भाई अनुजा का अरुण देश!

जैनाश्रम-सीमा पर ही शबर-विछोह-मोह
उस तिमिरवर्ण मानव-मन में कुछ आह-ओह
पूछा, तो कहा कि "प्रभु! मेरा 'निर्घात' नाम
आए थे कभी इसी वन में भगवान राम

"सबसे पहले हम ऋषि अगस्त्य के लिए झुके
प्रेमाग्रह से वे भी जीवन भर यहीं रुके"
अपलक दृग में लहराया जब जैमिनी-ज्वार
खुल गए भारती के विराट् सांस्कृतिक द्वार

सस्नेह समर्पित हर्ष-हस्त से रत्नमाल
शबरालिंगन कर विदा हुए श्रीकंठपाल
प्राणों के पल्लव पर स्मृति-पारद टलमलटल
नयनों में कभी-कभी कोमल करुणाश्रु-कमल

एक दिन आकाश-पट के लेख को
पढ़ रहे थे हर्ष तन्मय दृष्टि में
चू रही थी काव्य की शेफालिका
भूमि के इतिहास पर उस रात में

चुन रहे थे कृष्णवर्द्धन स्वर-कली
चाँदनी की उस मधुर बरसात में
हृदय की हरियालियों पर लिखी थी
चन्द्र-किरणों से प्रखर रवि की कथा

हर्ष ने देखा कि दर्पण है वही
रूप में नव रंग स्थायी ल[illegible]ा
वह चितेरा चतुर है जो सत्य को
खड़ा कर दे स्वप्न के सौन्दर्य पर

एक दिन आकाश के शशि-ग्रंथ को
पढ़ रहे थे वाण केन्द्रित ध्यान से
पृष्ठ अन्तिम आ गया था सामने
किन्तु उनका नाम अंकित था नही

और, तव कादम्वरी वोली वहाँ
: अमरता मै हूँ तुम्हारी ज्योति की,
रंग सातों लगे जिस सौन्दर्य में
उसे मत रखना अधूरा कभी भी

शक्ति का उपयोग हो यदि ठीक से
व्यक्ति अपने शिखर पर चढ़ जायगा
गुणी वे ही, जो गुणों को सींचते
स्नेह-जल से सहजता की भूमि पर

एक दिन आकाश-झंझावात में
वुझ गया दीपक किसी के सूर्य का
किन्तु धरती जानती थी सत्य को,
फिर विभा विखरी गगन के प्राण पर

और, तब से बाणभट्ट विकल नही
भोजपत्रों पर उतरती कल्पना
किन्तु भीतर एक ऐसा रोग है
जो न स्थिर रखता तपस्या-ध्यान को

कीट-गति में अब हिरण-संवेग है
मन्दगामिनि किरण मन से फूटती
हो रहा संदेह भी कुछ प्राण में,
कही पूरी हो नहीं कादम्बरी!

शक्ति की क्षय हो गई संघर्ष में
घने बादल दे दिए श्रीहर्ष को
अब प्रखर आकाश कुछ रोने लगा
क्योंकि इच्छा की मही भींगी नही

खा रहा ओषधि, परन्तु न लाभ कुछ,
हर्ष तक चिन्तित उदर के रोग से
आग में कुछ फूल मेरे जल रहे,
पर तरलता है अभी उद्यान में

लिख रहा कादम्बरी की मृदु कथा,
पूजता हूँ मृत्यु से अमरत्व को
कल्पना ने गढ़ दिया यदि स्वप्न तो
जगमगाएगा सदा साहित्य में

त्रयोदश सर्ग

प्रियतमे !
सर्व प्रथम स्वीकार करो
कल्पना-मिलन-निशीथ की अधरामृतलता,
भर लो भुजापाश में मेरी लहलहाती स्मृति;
संस्कृतभाषिणी शुक-सारिकाओं से कह दो
कि सम्राट्-सम्मानित वाण का केवल स्थूल तन ही
निवास करता है राजनगर स्थाण्वीश्वर में,

किन्तु
मन तो सदा हिरण्यवाह शोण-तट पर स्थापित
प्रीतिकूट के वन-उपवन में ही विचरता है !

आज मैं महाकवि हूँ मल्लिके !
पर, कल तक तो वहीं का पृथ्वीपुत्र था;
जन्मभूमि में जय करने पर भी नहीं मिलती विजय,
वहाँ का मातृस्नेह ही मणिकिरीट है !

तुमने लिखा
कि एक दिन एक सुन्दरी संन्यासिनी आई
और कुसुमित कुन्तल चूम कर चली गई...
सुनयने! जानता हूँ वह कौन थी;
तुमसे तो रहस्य की प्राण-कथा गुप्त नहीं
वह रेखा रही होगी शुभ्रे!
ढूँढने गई थी (तुममें) स्वर्गीय वेणी का आत्माकारा।

स्मरण रहे शुभे!
कि जीवन में अनेक सूक्ष्मात्माओं का
होता रहता है आदान-प्रदान
बिछड़ी हुई साँसों के पूर्व संगीत—
गूँजते हैं पंचभूत के कालप्रवाह में।

जीवन बड़ा व्यापक है अर्द्धाङ्गिनि!
जल उठते हैं दीप से दीप,
मिल जाती है साँस से साँस।

कल्पना-केलि की मेरी वे दोनों सहचरियाँ
अव्यक्त आत्म-ग्रंथ की पृष्ठ-प्रभाएँ हैं;
प्राणाकाश के नीलांशुक प्रच्छदपट पर उदित
सूर्य-चन्द्र-सी वे ज्योतिर्मयी कलियाँ
शुष्क इतिहास से
प्रतनु-याचना नहीं करेंगी!

कवि अपनी कृतियों में
भर ही देता है आत्म-गंध,
पर, कला का अन्तिम अस्तित्त्व
सदा ही ओझल रहता है दार्शनिक लक्ष्य-रूप की भाँति

त्रिक-शोभिता प्रकृति में सर्वत्र छिपा है सृष्टि का विराट् शिल्प
पर किसी विन्दु पर कहीं रुका है वह ?
ध्यान की धरती पर केवल उसका तात्त्विक प्रतिविम्व
दीख पड़ता है नयन की प्रगाढ़ ज्योति में।

सौन्दर्य के श्रेष्ठतम कलाकार—
कालिदास को किसी ने पहचाना कहाँ ?
दृष्टियाँ ढूँढ़ती हैं अधिकतर स्थूल सत्य
पर, सूक्ष्म प्रेरणा के अणु-परमाणु को
कितने लोग देखते हैं ?
बाण को कोई बाण ही पहचानेगा;
ब्रह्मनिष्ठ ही जानता है ब्रह्म-सत्य।
काव्य-जीवन के मूल मर्मस्थल को
छूता है केवल वही कवि
जो कल्पना के सूक्ष्मोद्गम पर बैठ कर
तपस्या करता है प्राचीन ऋषि की भाँति।

अतल ज्ञान-महासागर में डुबकियाँ लगाकर
महर्षि व्यास ने प्राप्त किया था कृष्ण-प्रतीक,
वाल्मीकि के राम में कवि की आत्म-निष्ठा व्याप्त थी।
जीवन-तप से कला भिन्न नहीं मृदुले !
आचरण-चिन्तन की प्रतिध्वनि ही—
काव्य-सृजन की महिमा है।

भगवान बुद्ध ने आत्म-अस्तित्त्व को स्वीकारा नही,
किन्तु प्राण के उज्ज्वल निर्वाण की कामनाएँ कीं।
लोग मानें या न मानें,
मैं तो कहूँगा—कहता रहूँगा
कि तथागत आत्मा की साकार मूर्त्ति थे;
क्योंकि
उनके व्यापक हृदय में
कल्याण, करुणा और प्रेम का वास था।

कला-परिव्राजक के रूप में
समस्त उत्तराखण्ड में
वैदिक सत्ता की कथा कही थी मैंने,
सम्राट् हर्षदेव को भी यही सुना रहा हूँ।

कहाँ से कहाँ वह गया मैं,
कुछ भी हूँ, वात्स्यायन-कुल का ही दीप हूँ,
मेरी श्वासों में दर्शन की शब्द-गंध है,
मेरी माता वैदेही थी मल्लिके!
रक्त में वह न सही, उसकी किरण तो है,
प्राण पर वह न सही, उसके चरण तो हैं!

आर्ये!
निराभिमान अधिकारी, एषणाहीन द्विजाति,
रोष-विहीन ऋषि, मत्सर-रहित कवि,
लाभोचित वणिक्, खल-शून्य धनी,
ब्राह्मण अद्वेषी पराशरी भिक्षु,
भिक्षा-त्यागी परिव्राट्, अमात्य सत्यवादी,
दुर्विनीत राजपुत्र, मिलना कठिन है
परन्तु देवि!
धरती पर कुछ मनुष्य ऐसे है—
जो विभा बटोर कर रखते है प्राणों पर!

नालंदा-कीर्ति-ध्वजा क्यों सुदूर द्वीपों में—
अबतक लहराती है, ज्ञात तुम्हें ?
कुलपति आचार्य शीलभद्र ज्योति-स्तंभ हैं
उनके निष्काम ज्ञान के गहन साम्राज्य में
सिंहल, कटाह, मलय, यव, वारुण, कमल, सुवर्ण,
वारुपक, पण्युर्यायिन आदि-आदि द्वीपों के—
छात्र ज्ञान-दान-ग्रहण करते हैं, जीवन में—
कर्म-मन-वचन पर
अनुशासन रख कर निज चारित्रिक रश्मि से।

चीनी विद्वान श्रीह्वेनसांग
दिव्य बौद्ध भारत का ज्योतिर्जल पीकर अब
करते अनुवाद-कार्य।

भारत तो दर्शन की स्वाभाविक भूमि है,
दर्शन-अनुप्राणित है मेघदूत काव्य भी,
बादल-जययात्रा में आत्म-विरह-सत्य है।

फिर कहाँ से कहाँ आ गया मैं,
भाव-कल्पनाएँ होती ही हैं चंचला,
नयनों के अंचल पर कोई प्रतिबन्ध नहीं।
उसमें भी मैं उदार प्राणी हूँ,
तूलिका चलाता हूँ रंगभरी भाषा की।
पढ़ना कादम्बरी,
रंगों में डूब रहे सभी पात्र,
कृपण नहीं दृष्टि प्रिये !
रूप-रंग-विश्व का धैर्यवान् ब्रह्मा हूँ !

संभव है, काल ध्वंस कर दे अजन्ता का,
किन्तु स्वप्न-स्कंधावार कैसे ढह सकता है—
जो कि बाण शब्दों से बना रहा ?

मेरी आत्मा-प्रशंसा पर हँसना मत आर्ये,
विदुषी विधु-वधू से सबकुछ कह सकता मैं।
तुम्हारे भ्रू-विलास को
अंकित कर दिया है आज एक रम्य रूप में,
पतली-पतली सी अंगुलियों की कलियों को
गढ़ दिया है किसी के कमनीय अरुण हस्त में।
तुम्हारे कोमल कपोलों की नवनीती मृदुलता
रख दी है ज्यों की त्यों किसी की वासन्ती पूर्णिमा पर।

तुम्हारा घुँघराला कापाय-कुन्तल-कुंज
लहरा उठा है किसी के रस-कलश की राका पर
नीवी, ग्रीवा, यक्षिणी-वक्ष...सब कुछ
ओ कश्मीर-कुमारी-सी पुलकित पद्मिनी,—
गजगामिनी प्रणयिनी हिरणलोचने !
नव रंग-बाहु में तुम्हें ही भर कर
मुखर कर दिया है काल-पृष्ठों को !

देख लेना अपना साहित्यिक दर्पण,
मिला लेना होठ से होठ,
छू लेना हाथ से हाथ,
बात कर लेना अपनी अमर परछाई से
सो जाना क्षण भर निज सौन्दर्य-शय्या पर,
और कहना मुझे—धन्य हो गई महाकवि !

और तब,
प्राण-वल्लभे ! मान जाना मेरी छुपी-छिपी बात,
निःशब्द रहूँगा मैं
जैसे निशान्त की मलयपवन-वेला में
चुप-सा रहता है मधुमत्त भ्रमर
प्रेमाकुल चन्द्र-चुम्बित पद्माङ्क पर !
उमंगभरी चाँदनी रात की दुग्धा तरंग पर
कल्लोल मत करना तुम
केवल भाव-नृत्य की मूक मुद्रा से ही
लुटा देना स्वर्ग का पारिजात-पुष्प,
गंध ही बिखराना स्वच्छन्द श्वास की,
कामिनीलता खिलती-हिलती, बोलती नहीं,
खोलती केवल हृदय के अर्द्ध मुद्रित नयन !

चार दशक पार करने पर भी
मेरे पत्र में प्रेमांश आ जाता है प्रिये !
दिखाना मत किसी को यह काव्य-पत्र
अन्यथा कहेंगे लोग : अभी भी बाण इत्वर है,
भारत-कवि बन कर भी
उल्लास-पर्व मनाता है मन की इन्द्रपुरी में !

बात यह है सुवासिनी !
कि कवि का कोमल-निश्छल हृदय सदा ही तरल रहता है,
किसी दिन, किसी कारणवश,
जब
हृदय की चमकती नदी में अत्यधिक दर्शन-चिन्तन की—
उठने लगती है आग,
विराग उत्पन्न हो जाता है सहृदयता में !

अरी, कविता स्निग्धता और कोमलता की ही सुधा है,
कठिन दार्शनिकता का नर्मदा या गंगाजल नहीं;
लालित्य और मधुरिमा को
बुद्धि के वंदीगृह में वन्द करके
काव्य-साधना उस मरु के सदृश है
जहाँ भावना की चातकी
तरसती रहती है कला-स्वाति-विन्दु के लिए !

कालिदास का मूल्यांकन केवल काव्य से ही नहीं,
काव्य-पथ के शाश्वत निर्माण से भी है मल्लिके !
रस बनाने की कला यों तो आदिकाल से ही पनपी,
ऋषियों ने समुद्र तक वना दिया
पर उसने रस-निर्माण की सीमा-रेखा खींच दी।
फिर भी कला की व्यापकता असीम है,
सीमाएँ और भी निर्धारित होंगी
प्रत्येक युग में जीवन की कल्पनाएँ
चुनती रहेंगी संसार की स्वप्न-कलिकाएँ,
लहलहाती रहेंगी नित-नूतन कविता की लतिकाएँ
किन्तु,
काल के कर में जलेंगे बहुत कम शाश्वत काव्य के प्रदीप !
क्योंकि जीवन से ही होता है सरसता का अमर सृजन
और, जीवन को
कला के महासागर में डुबाना सरल कार्य नहीं।

यह कैसे कहूँ मल्लिके !
कि देवासुर-संग्राम की भाँति
जव जीवन के कलाक्षेत्र में
होता है परिस्थिति का तिमिर-किरण-कठिन समर,
सहज चेतना के भावात्मक प्रलय में
महाकवि किसी आत्म-शिखर पर बैठकर
लिखने लगता है शाश्वत छन्द !

ठीक यही स्थिति होती है अन्य महापुरुषों की,
वुद्ध के प्राणों में भी हुआ था प्रक्रिया का महाप्रलय,
तब तो उनकी कल्याणमयी बातों में
करता है वास मनुष्यता का प्रखर आलोक।

हे साहित्यमयी मदिरलोचने!
चित्रग्राहिणी वुद्धि से ही संचित होती है काव्य-निधि
इस समय भारत में,
रागद्वेष से भरे हुए वाचाल
मनमाने ढंग से रचते हैं काव्य,
जिन्हें अकवि कहा जा सकता है।
फिर भी,
उदीच्य जनों में श्लेप-प्रधान शैली,
प्रतीची में अर्थपूर्ण कथा-वस्तु
दाक्षिणात्य में उत्प्रेक्षा या कल्पना की उड़ान
और
प्राची में शव्द-संवटन की विशेपताएँ हैं।

मेरी दृप्टि से
विपय की नवीनता,
उत्तम स्वभावोक्ति और सहज श्लेप,
सामासिक शव्द-योजना और स्फुट रस से ही
उत्कलिका, पूर्णक और आविद्ध शैली में
संभव है प्रणयन नव काव्य का।

अभिव्यक्ति की एक झलक देता हूँ तुम्हें
कि, शोण चन्द्रपर्वत से निकला हुआ झरना है अमृत का।
कि चन्द्रकान्तमणियों का निचोड़ है विन्ध्याचल।
और दण्डकारण्य,
कर्पूर वृक्षों का चुआ हुआ है प्रवाह!

सोचता हूँ यहीं पर कर दूँ समाप्त
यह गद्यगंधा-पत्रिका,
किन्तु तुम कहोगी कि वर्णन कुछ किया नहीं
हर्ष-राजभवन का।

तो देखो,
स्कंधावार के वाह्य सन्निवेश में
कोई आवश्यकता नहीं प्रवेश-अनुमति की,
दर्शक देखते विविध विभाग-स्थान
साम्राज्यान्तर्गत नरेशों के भव्य शिविर,
पंचदश सहस्र हस्ति-सैन्य,
पंचभद्र, मल्लिकाक्ष, कृत्तिकापिंजर आदि अश्वों की—
सुविशाल गठित सेना,
समर-शिक्षा-प्राप्त उष्ट्र-समूह,
शत्रुसामन्त-कक्ष, आश्रित भूपाल-शिविर,
संन्यासी, दार्शनिक, भिक्षु आदि के निवासस्थान,
सर्वसाधारण भवन,
यवन, पारसीक, हूणं, शक, पह्लव आदि म्लेच्छ जाति के—
विशिष्ट अभ्यागत-हित निर्मित अनेक कक्ष
और, राजदूतों के भव्य भवन!

प्रतिबंधित अन्तर-सन्निवेश में
राजवल्लभ तुरंगों की मंदुरा,
आस्थानमंण्डप के बाद भुक्तास्थानमण्डप,
जहाँ
भोजनोपरान्त मिलते महावाहिनीपति—
सम्राट् हर्षदेव विशिष्ट व्यक्ति से।

राजकुल की सर्वोत्कृष्ट कक्षा है धवलगृह :
वर्तमान भारत का महास्वर्ग !
जहाँ गृहोद्यान में लतामण्डप, क्रीड़ागिरि, कमलवन।
फिर, गृहदीर्घिका, जहाँ गंधोदकपूर्ण क्रीडावापियाँ-सहित
कमलहंस-शोभित विहारकुंज यौवनमय !
फिर, यन्त्रधारायुक्त स्नानागार,
व्यायाम-भूमि !

ऊपरी तल में अलका-जैसा शयनगृह,
वहीं पार्श्व में मुक्त चन्द्रशालिका भी,
जहाँ राजरमणी करती स्निग्ध ज्योत्स्ना-स्नान
पढ़ती नीलाकाश-ह्रास की समस्त पाण्डुलिपियाँ
देखती पावस में सघन-हिरण-घन
और,
पूछती विद्युत से कुछ भीगे-भींगे प्रश्न !

मल्लिके ! वहीं पर एक प्रसाद-कुक्षि-स्वर्गीय
जहाँ अन्त:पुर की किन्नरियों का संगीत-नृत्य।
वाद्य-वातास से सम्मिलित
ताल-लयपूर्ण कंठ-विलास का उल्लास,
काव्यानन्द-प्रमोद-विनोद भी।
सुगंधित ताम्बूल और पेयरस से तन-मन सरस-सरस।

विशेषोत्सव के दिन,
दुन्दुभी और शंख पर जयोच्चार,
द्वार-द्वार पर कलश, वन्दनवार

पुरोहित के पावन कर में शान्ति-जल,
मुख में मंत्र मंगल-मंगल
और,
सुसज्जित अन्तःपुर में
क्षौम, बादर, दुकूल, नेत्र, लालान्तुज, अंशुक,—
विविध वसनशोभिनी वारविलासिनियों के—
रंग-विरंगे श्लील-अश्लील संगीत।
वेणु, आलिग्यक, तंत्री पटह, झल्लरी,
अलाबु-वीणा और काहल का मिश्रित सुर-संलाप,
दृगों में सुरचाप-सी शोभाएँ।
अभी इतना ही,
लो स्नेह-दान
मै वही तुम्हारा, चपल बाण

———

भाषा के अन्तरंग कवि-मित्र ईशान !
मैं हूँ तुम्हारा वही दलपति भट्ट बाण;
स्मरण है अभी भी यात्रा-पथ की एक-एक बात,
कटे कैसे दिन, कटी कैसे रात,
हुए प्राणों पर कैसे-कैसे आघात,
स्मरण है सबकुछ मित्र !

कभी-कभी स्वप्न में देखता हूँ
श्रृंखलाबद्ध नाटक का उत्थान-पतन,
भर-भर जाते अतीत के नयन से ये तृषित-तृप्त नयन !

निष्फल कोई भी प्रयास नहीं ईशान,
सफलता कभी भी सम्पूर्ण नहीं,
इस कटु संभाषण पर
देना बार-बार ध्यान।

भगीरथ की भाँति,
अंधकारमय शिव की जटा से
नाट्य-कला-गंगा को निकाल कर
चले हम करने उद्धार, असंख्य दृग-पुत्रों का।
शोण की संवेदनशील दीपशिखा लेकर
हमने परिक्रमाएँ की प्रायः सभी जनपदों की।

सत्य है, हमारी मंडली टूट गई,
माधवी से सभी आँखें रूठ गई,
हो गई समाप्त सारी सम्पत्ति भी,
विपत्ति में रहे साथ-साथ हमदोनों,
निर्झरों और नदियों का जल पी-पीकर—
कन्दमूल खा-खाकर लौटे वाराणसी।

स्मरण है मित्र, एक-एक घटना,
अजन्ता और उज्जयिनी की वे लुभावनी रातें
कितनी प्राणदायिनी थी !
प्रयाग के सरित-संगम पर गीत-गुंजित नौका-विहार
कितना आनन्ददायक था मित्र !

वास्तुकलाओं के सूक्ष्म अवलोकन में
कितने तन्मय थे हमदोनों,
गंधर्व-सुन्दरियों के शास्त्रीय कंठ से
निकली थी जो तरंगित प्राण-धाराएँ,
तुम नहीं भूले होगे मित्र !
माधवी की भ्रूलता के वंकिम कटाक्ष में
खिली थी जो वशीकरण की सम्मोहन दृष्टि-कलियाँ
उन्हें रख दी है कादम्बरी की चित्रशालिका में !

सुना है, अब तुम दो हो गए,
उस प्रणयोत्सव मे मुझे बुलाया नहीं क्यों ?
क्या मै आता नहीं ?
मित्र ! मेरे जीवन मे
मित्रता का स्थान अत्युच्च है,
मेरी अग्नि-परीक्षा हो जाती तुम्हारे आमंत्रण से।

बाण के काव्योत्थान मे
स्नेह-सहयोग है उन महाय और सुहृद मित्रों का—
जो घर-द्वार छोड़ कर चले संग-संग कलातीर्थ में।
हर्षचरित में सबका स्मरण किया है मैंने,
रेखा और वेणी को अंकित नहीं किया मित्र,
कहोतुम्हीं, कैसे उतारूँ मैं उन्हें?
अन्तरात्मा की वे दोनों विहगियाँ
बैठना नहीं चाहतीं प्राण-शिखर पर
और, मैं भी
नयन से बाहर नहीं चाहता निकालना।
कुछ तो छिपा हुआ रहे मित्र!
जैसे ललित काव्य का ध्वन्यात्मक अर्थ
निकल कर भी नही निकलता
वैसे ही,
उन्हें निकाल कर भी नहीं निकाल पाता।

ईशान! मेरे दोनों ग्रंथ अधूरे है अभी,
एक-एक वाक्य को सुनते है सम्राट्,
एक-एक उपमा पर करते है अंगुलि-पूजन!

क्या कहूँ,
एक दिन चूक-सा गया व्यवहार में।
उनके काव्य-ग्रंथ को देख कर
कह दिया कि यह अशुद्धियों का स्तूप है!
सखे! वे विचलित नहीं हुए तनिक भी
बोले: "मै कवि नहीं, एक भाव-योद्धा हूँ"
तब मैंने कहा: "नरेश! नाटक में शक्ति है"
खिले कृष्णवर्द्धन यह सुनते ही,
औ" मयूर भट्ट भी हुए विमुग्ध।

तुम तो जानते हो मित्र,
कि मैं कितना मधुर स्पष्टवादी हूँ,
अवसर पर उक्ति-तीर छोड़कर सुनता हूँ प्रतिध्वनि।
मेरा उद्देश्य नहीं,
चाटुकार बनूँ स्वर्ग-कुक्षि में!

मित्र! मेरी जन्मकुण्डली को देखकर
हुए है हर्षदेव कुछ चिन्तित!
ब्रह्मा ने मेरे जीवन की नदी लम्बी नही बनाई
वय की धारा सूख जानेवाली है शीघ्र ही!

सोचता हूँ, अब—
एक-एक क्षण के उपयोग से
करूँ वाणी का अविरल शृंगार,
संसार को अर्पित कर दूँ सर्वस्व।
है ही क्या मेरे पास मित्र?
कुछ रंगीन भाषा और भाव की कथाएँ हैं,
गूँथ रहा हूँ इन्हें रच-रच कर!

उदात्त काव्य का सृजन होता है उदात्त वय में,
मैं तो अभी भी अबोध हूँ,
केश काले है मित्र!
शुभ्रता आई कहाँ,
(आनेवाली भी नहीं)
फिर भी कुछ नवीनताओं की अंजलि लेकर
खडा हूँ भारती के विराट् द्वार पर।

अमर तो वे ही होंगे
प्रखरता है जिनके पास,
शक्ति है जिनमें नौका खेने की—
काल के असीम सिन्धु पर!

छोटी अवस्था की सीमा में
मैं कितना क्या करूँ मित्र,
अभी तो इत्वरता का ही कोश है
अमरता का संग्रह कहाँ किया है ईशान !

मेरी मृत्यु के बाद
शोण से क्षमा माँग लेना,
कहना कि बाण झंझा की तरह आया
और झंझा की तरह चला गया,
प्रदीप में तेल अधिक नहीं था
कुछ दिन जलकर बुझ गया !
इतना कह देना ईशान, भूलना नहीं !

शोण की रेत पर ही लिखा था अनामिका से
श्वेत बालू का पहला श्लोक,
और, लहर ने स्वीकार किया था उसे।
मेरा प्रथम गीत जल पर बह गया, बह गया ईशान !
आऊँगा तो रचित एक-एक वाक्य
एक-एक शब्द सुनाऊँगा शोण को,
प्रथम पूजा वही करूँगा मित्र !

स्मरण है शैशव के वे दिन,
बाल यौवन की वह रात,
वे खुली-खुली बातें शोण से छुपी नहीं।

अहा ! मेरे पूर्वजों ने उसके तट पर—
की थीं कठिन तपस्याएँ
किन्तु मैंने उनके संचित पुण्य को लुटा दिया !
क्या कहेगा इतिहास ?

ईशान! मैं प्रासाद में रह कर भी
दूर हूँ राग-रंग से,
तुम्हें तो ज्ञात है मेरा आन्तरिक स्वभाव।
प्रतिभा ने पुरस्कृत किया मुझे,
यहाँ की अर्जित सम्पत्ति
वितरण कर दूँगा सभी मित्रों में!
वाण पर सभी मित्रों का है समान अधिकार,
क्या इतना भी नहीं होगा मुझसे?

मेरे अभिन्न मित्रमण्डल से—
कहना यथायोग्य मेरा हार्दिक नमस्कार,
कभी-कभी,
तुम लोग आना-जाना भी,
मित्र-मिलाप से बढ़कर दूसरा कौन आनन्द है ईशान?
फिर लिखूँगा कभी, अभी इतना ही,
तुम्हारा, वाण

चतुर्दश सर्ग

मंजरित आम्रवन-अम्बर से
कपिला संध्याभा जाती-सी
काषाय-कुन्तला नील वधू
उडु की वर्त्तिका जलाती-सी

अज्ञात यौवना बाला में
कनकान्ध किरण-सी आती-सी
फेनोज्ज्वल प्रच्छद पटी
इन्दु-कंचुक-पथ पर लहराती-सी

नव इन्द्रनीलमणि-सी यामा
बाँहें पसार मुस्काती-सी
मंथर गति से कुछ रुक-रुक कर
आती-जाती सकुचाती-सी

निशि की किरातकन्या चुपके
शशि-पंछी एक उड़ाती-सा
पिंजर में शत उडु-खग भरकर
नीली लहरों पर जाती-सी

शूद्रक के स्वप्न-सभास्थल में
कल्पना बाण की आती-सी
संस्कृत की कथा-लता नूतन
शाश्वत छवि-सी फैलाती-सी

आकाश-हर्ष सम्राट्-धवल—
गृह में चन्द्रोत्सव होता-सा
कादम्बरि-मदिरा-तरल ज्वाल
उर-यौवन पर मन ढोता-सा

सौन्दर्य-वक्ष पर झरती-सी
पाटल-पंखुड़ी चमकती-सी
हिममयी हिमालय-निशि-विटपी
विद्युत् से स्वयं दमकती-सी

हंसिनी-यामिनी कुमुद-कली
दिशि-शुभ्रांचल में भरती-सी
कमनीय कपोती एकाकी
झिलमिल नभ में कुछ डरती-सी

राका-रमणी अभिसारमयी,
चंचल चितवन अकुलाई-सी
मोहिनी मेनका निकल पड़ी
लेकर अलका-परछाईं-सी

निर्वन्ध्या-शोण-तराई में
मरसों-यव-गेहूँ-चना-मटर
स्वर-प्रखर वायु-संवेगों से
अन्नाच्छादित क्षिति समर्-सर्

पथ-पथ में पागल ऋतु-प्रलाप
दिशि-दिशि में पुष्पित अट्टहास
मदनीय मधुरता से मुखरित
विधुमय वासन्ती दिशाकाश

रसमयी रात में विदित बात,
कोकिल रसाल-वन में विहरित
रूठी-सी मदिरलोचना भी
नतकुमुद-कली-सी अलि-कम्पित

गूँजती बाण की पूर्व कथा
अधुनानन्दित वन-फूलों में
उड़ती अतीत की सुधि-सुगंध
केशर-कुंकुम-सी धूलों में

शत सखा-कंठ में सुयश-गान
उन्मद उत्तीर्ण तरगों पर
विजयी सेनाएँ तूर्य-नाद—
करतीं ज्यों यवन-तुरंगों पर

बाणाह्वानित हर्षित मैत्री
बडवानिल-सी गज-गर्जित-सी
मलयानिल-सी इच्छिता श्वास,
ज्यों द्युतिवदना घन-घर्षित-सी

यश-अमृतवृष्टि से जीवन की
चापल्य-कालिमा धुलती-सी
सौभाग्य-सुऋतु के करलव से
तम-ज्योति-ग्रंथियाँ खुलती-सी

अभियानित सिद्धि-वेदिका पर
अब आर्जुनेय स्वर-मंत्राक्षत
साहित्य-यज्ञ-पूर्णाहुति में
पक्वायु-पुरुष भी गर्वोन्नत

दृग-दृग की दृष्टि तरंगायित
तेजस्वी प्रतिभा-दर्शन-हित
इत्वरता-एलालता स्वयं
सुप्रौढ़ स्वस्ति-शोभा-संस्कृत

पग-पग पर पद-पंकज-पूजा
दुर्गुण भी गुण में परिवर्तित
गौरव-गिरि पर ऐच्छिक प्रभात—
करता तन-मन को आकर्षित

केवल उड्डु भट्ट अशान्त, मौन
बन्धन से अन्त:करण दुखित
कुछ झुका-झुका-सा स्वाभिमान
स्वातंत्र्य-नयन लज्जित-लज्जित

शास्त्रत्व-स्वत्व-अपहरण देख,
शोणित में नित आग्नेय किरण
चलते-चलते रुक-रुक जाते
तप-तन्द्रिल मंत्राबद्ध चरण

वात्स्यायन-कुल-अस्तित्त्व-तिलक
मिट गया स्वर्ण आकर्षण से
गीता अशुद्ध हो गई स्यात्
सम्राट्-चरण के वन्दन से

झुक गई मुक्ति की मंत्र-ध्वजा
राज्यासन-सम्मुख प्रथम बार
करने लग गया सुवत्स-दीप
नृप-सत्ता को नत नमस्कार

प्रतिभा को हर ले गया हाय,
प्रभुता-पौरुष चन्दन-वन से
हे प्रीतिकूट की आत्म-धरा
कुछ पूछो तुम्हीं दशानन से !

लक्ष्मण-रेखा मिट गई, कनक–
मृग-मन के ऐन्द्रिक छल-बल से
मैं करुँ कहाँ तक शान्त हृदय
कलुषित करुणा के दृग-जल से

मन्दिर-प्रदीप ले गया काल,
देवता प्राण के रोते हैं
चढ़ते जो केवल आत्मा पर
ऐसे प्रसून भी होते है !

तन जहाँ, वही पर मन वंदी,
सीमा पर शब्द झरेंगे ही
जिस भू से उमड़ेंगे बादल
उस भू पर तो बरसेंगे ही

कैसे मैं मना करूँ मन को,
सब दिन से उसका स्नेही हूँ
सम्राट् जानते नहीं स्यात्
मैं देही मुक्त विदेही हूँ

वात्स्यायनकुल मन-मुक्तिदूत
सत्ता-पूजा से भिन्न सदा
कौंधी न कभी इस अम्बर में
पद-लोलुपता की घन-चपला

अकलुष उर की सरला वसुधा—
उन्मुक्त व्योम-वंदनामयी
अरुणोज्ज्वल अन्तर्मुखी दृष्टि
आत्मानुराग-अर्चनामयी

मैं शान्त तपोवन का वासी,
निष्काम कर्म में रत जीवन
पावन श्वासों की समिधा पर
करता हूँ प्रतिपल प्राण-हवन

अलि में नित जीवन-गुजन भी,
पर नित्य प्रखर मधु-ज्योति-पान
शतदल-कुटीर में रह कर भी
सर्वदा सत्य का विष्णु-ध्यान

मैं कर न सकूँगा व्यक्त कभी
अन्तर्वेदना बाण-सम्मुख
कोमल होता कवि-हृदय-कुसुम
हो उसे कभी भी तनिक न दुख

कह गए पिता निज निधन-पूर्व,
"पालना इसे तू सुत-समान
रोकना नहीं अन्तर-प्रवाह
यह नहीं करेगा कठिन व्यान"

मृदु व्राण पुत्र-सा प्रिय पवित्र,
नयनों में ममता मातृ-तुल्य
शंका-विहीन मम शुभ्रान्तर—
आँकता रहा वात्सल्य-मूल्य

हो सुखद सर्वदा लौकिकता,
स्थायी हो सुपमा-स्वर-प्रमाण
हो व्याप्त एक दिन विश्व-घोप—
'है काल-विजेता महाव्राण'

चाहता पिता, हो पुत्र यशी,
नक्षत्रों-सा चमके भू पर
वंदी रह कर भी नृप-गृह में
विचरे किरीट-मणि से ऊपर

कवि तो विमुक्त भावों का रवि,
अन्तर-प्रकाश का गायक है
पूजे सिहासन जिसे सदा
वह वैसा स्वर-उन्नायक है

चेतना-पुरुष सक्षम शिल्पी,
संवेदनशील चितेरा कवि
कोमल किरणों में छुपा हुआ
सतरंगी सरस सवेरा कवि

कवि तो त्रिकालदर्शी ब्रह्मा
वह परा और अपरा-द्रष्टा
अक्षर-वसुन्धरा पर सस्वर
आत्माम्बर का सुन्दर स्रष्टा

कल्याणानन्द-प्रणेता कवि
सुन्दरता का शिव-संन्यासी
अन्तर-सागर में मानस-गिरि,
उज्जयिनी मे उत्पल-काशी !

नित शयन-कक्ष में स्नेह-दीप
जलता मल्लिका सुहासिनि का
खिलता नयनाम्बर में चम्पक—
चन्द्रमा-कुसुम शुभ्राश्विन का

पति की पत्री पढ़-पढ स्वप्निल
अलसाई आँखें सोती-सी
आवरणहीन-सी विधुवदनी
कुछ हँसती-सी, कुछ रोती-सी

सुरभित शय्या पर आलिंगित
कामना-बाहु वल्लरियों-सी,
उठती-गिरती साँसें, छवि के
अम्बुधि में लोल लहरियों-सी

यौवन-प्रदेश की राजपुरी
स्मृति को आमंत्रण करती-सी
प्रिय-मिलन-निशा की अमृत-कली
आकुल अधरों पर झरती-सी

पंचदश सर्ग

पिपिँग-वासी बौद्ध भिक्षु लू वांग !
भारत से लिख रहा पत्र मैं ह्वेनसांग,
महारण्य-गिरि-दुर्गम पथ कर पार
उत्तर-पच्छिम शैल-शिखर से
देखा आर्य-देश का वैदिक द्वार।

हिमाच्छन्न उत्तुग हिमालय पर अरुणांकित प्रात
संस्कृति-मानसरोवर में विकसित जीवन-जलजात
नद-निर्झर-सिंचित वसुन्धरा अन्न-फूल-फल-पूर्ण
जन-मन-पूजन-मुक्तपात्र में केशर-चन्दन-चूर्ण

विधुवदना विदुषी वसन्तवसना संस्कार-सुशोभित
तालबद्ध सांगीतिक स्वर से आत्म-कंठ नित गुंजित
धन्य हुई मेरी यात्रा हे मित्र, निरख भू-स्वर्ग
स्यात् कहीं भी नहीं विश्व में इतना रम्य निसर्ग

फाहियान ने उचित लिखा, भारत देशों का देश
आए थे आकाश-मार्ग से कभी प्रसन्न सुरेश
उर-सरोज-सौन्दर्य-कोश में स्नेह-शील-मकरन्द
प्राण-पवन में प्रवहमान निर्मल मलयानिल-छन्द

मन विभोर अनिमेष नयन से देख प्रकृति-शृंगार
विधि-वसुधा को नमस्कार करता हूँ बारम्बार
महामनुजता-सिन्धुतीर्थ सर्वोन्नत भारतवर्ष
कला-धर्म-दर्शन-उत्प्रेरित नगर-ग्राम-उत्कर्ष

वैदिक-ब्राह्मण-बौद्ध-जैन-संस्कृति-रसप्लावित धरणी
किरण-काव्यमय कमलपत्र-सज्जित सुनील पुष्करिणी
व्याप्त विविधता किन्तु एकता की केन्द्रित अभिलाषा
दिव्य ज्ञान से पूर्ण महासागर-सी भारत-भाषा

योग-भोग से व्याप्त सभ्यता, ऋद्धि-सिद्धि-अनुरंजित
कोमल कठिन कर्म से चेतनशील कलाएँ मुखरित
वर्षों तक देखता रहा मैं बाह्य-देश की सुषमा
फाहियान ने दी थी इसकी देवलोक से उपमा

तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला-विश्वविद्यालय
अनुशासित छात्रों को करते शास्त्रों से ज्योतिर्मय

भौगोलिक सुविशाल देश का
शुभ्र हिमालय-शिखर तुषार-किरीट,
शिव-सुगंध से व्याप्त शान्ति-आकाश
चतुर्दिक
आत्म-ध्वनित ताण्डव का हास-विलास !

कला-पार्वती की क्रीड़ाएँ हिमोद्यान में
आध्यात्मिक चापल्य शैल पर मेघ-गान में
वादित वायु-मृदंग शान्त कमनीय छटा पर
चमक-चमक उठती कविता रमणीय घटा पर

चन्द्र-तूलिका हिम-शिखरों को चित्रित करती
निशि के नीलवृक्ष से तारक-कलियाँ झरतीं
पंख खोल कर देवदारु-वन में अप्सरियाँ—
शिव-सरिता में भरतीं सुर-हित इन्द्र-गगरियाँ !

भूपर-ऊपर किरण-चरण स्वच्छन्द तरंगित
ज्यों जाग्रत प्राणात्मा करती मन को इंगित
सलिल-गीत से गुंजित गिरि-निर्झरिणी झर-झर
उड़ती पक्तिवद्ध शत विहगी रंगविरंगी सस्वर

उत्तर के समतल भूतल पर
गंगा-यमुना-सिन्धु-ब्रह्मनद सदा प्रवाहित
मध्य भाग में विन्ध्याचल की शैल-श्रेणियाँ,
उसके नीचे
दाक्षिणात्य की कलामयी वंकिम वसुधा पर
वहतीं प्रतिपल
महानर्मदा, ताप्ती, गोदावरी और कृष्णा, कावेरी ।

इन नदियों के नीचे तीनो ओर
उद्वेलित अम्बुधि-प्रवाह उद्दाम,
पश्चिम पारस,
पूर्व ब्रह्म-भू
इसी मानमन्दिर का भारत नाम !

अति प्राचीन मनुष्य-सभ्यता-ज्ञानग्रंथ : ऋग्वेद
वर्णित जिसमें प्रकृति और जीवन-रहस्य का भेद
सूक्ष्म तत्त्व-दर्शन-अनुप्राणित ऋचा-स्तूप वेदान्त
गहन ज्ञान-सध्या में मानों भाषा का भावान्त !

वर्तमान भूमण्डल का
नालंदा ज्ञानागार,
होती जिसमें नित्य कठिनतम
वाणी की झंकार।

कुलपति शीलभद्र ज्योतिर्मय
स्वयं एक उप बुद्ध
सात्विक, तात्त्विक उन्नत जीवन शुद्ध।
योग-शास्त्र पर उनका ही अधिकार,
धर्मपाल, गुणमति, स्थिरमति, जिनमित्र (चन्द्रफल)
ज्ञानचन्द्र, सागरमति आदि प्रकाण्ड दिव्य आचार्य
सदा करते शिष्यो को प्यार।

देश-देश के दश सहस्र मेधावी छात्र प्रसन्न,
सदाचार-सुविचार-मधुरता—
से अन्तर आच्छन्न।
नालंदा में महायान-उद्यान,
मिलता हीनयान का भी गुरु ज्ञान।

बहुत दिनों तक,
बौद्ध और मैथिल पंडित में
हुए शब्द-संग्राम,
कटे विचारोत्तेजक दर्शन-याम।

अतुल तर्क का नव आदान-प्रदान,
हुई प्राप्त नूतन उपलब्धि महान।
खंडन-मंडन से भी मिलती ज्योति,
उड़ती अन्तराल में किरण-कपोति !

सिद्ध बुद्ध के प्रखर शिष्य उप तिस्स--
सारिपुत्त की पुण्यस्मृति में
नालंदा का हुआ कभी निर्माण,
राजगृह से उत्तर-पश्चिम
नलग्राम था उनका जन्मस्थान।

प्रथम चैत्य का नृप अशोक ने स्वयं किया था ध्यान,
कालान्तर मे
बौद्ध नरेशों के सुयोग से
बना दुर्ग सुविशाल,
बने अनेकानेक पद्ममय विस्तृत-विस्तृत ताल।
चारों ओर बने ऊँचे प्राचीर
नालंदा हो गया धीर-गंभीर।

महाविहारों के नभचुम्बी शुभ्र सौध पर
बैठ-बैठ कर वर्षाऋतु में
देखा करते हम वादल-उल्लास,

पढ़ते सस्वर जातक-कथा-पुराण,
त्रिपिटक-मंत्रों का भी करते ध्यान।
विद्युत् में ढूँढते—
महापाणिनि-कृत अष्टाध्याय,
सुनते हम चाणक्य-सुचिन्तित श्लोक।
घन-कलिंग की रण-समाप्ति पर
खिलता शारदीय अम्बर में
काल-कुमुद-वन में चन्द्रीय अशोक!

लिखूँ कहाँ तक मित्र,
बड़ा कठिन है पाना यहाँ प्रवेश;
मुख्य द्वार पर ही होती प्रतिहार-परीक्षा
तब-मिलती शिक्षित प्रतिभा को आश्रय-भिक्षा।

बीस वर्ष से कम वय वाले यहाँ न आते
तेजोज्ज्वलता से आए यदि,
पंच वर्ष तक
वृत्ति-सूत्र ही उनसे अध्यापक रटवाते।

शिक्षाएँ निःशुल्क,
सुभोजन, वस्त्र आदि का भी प्रबन्ध
करता नालंदा स्वयं,
सुनिश्चित आय ग्राम से।

अष्ट भाग में समय विभाजित,
भव्य भोर में शयन-त्याग-हित
बजता एक नगाड़ा, दिशि-दिशि होती गुंजित।

स्वयं छात्र औ' शिक्षक करते स्वच्छ सदन को
बुद्ध-वन्दना में अर्पित करते मृदु मन को
पुष्करिणी में स्नान और फिर उपाहार नित
सभी वर्ग के छात्रों मे संस्कृति स्वाभाविक

शील-सौम्यता का प्रसाद आचरणाङ्गन में
श्रद्धा-प्रेम परस्पर शिक्षक-छात्र-नयन में
यहाँ कभी संघर्ष नहीं, गुरुता, लघुता का
सदा दीप जलता प्रकाश-पुंजित समता का

धर्मगंज : पुस्तकागार में शान्ति स्निग्धतर
रत्नोदधि में नहीं गूँजता कभी तुमुल स्वर
मध्याङ्गन में एक पुष्प-उद्यान सुवासित
जहाँ तथागत-ताम्रमूर्त्ति पर्वत-सी स्थापित

नील पद्म-शोभित तड़ाग में हंसमालिका
बिम्बित जिसमें श्वेतस्फटिक-प्रधान शालिका
राजगृह का शैल-कुंज होता आभासित
गृद्धकूट-गिरि-शिखर दिखाई पड़ता कुसुमित

भरते दृग में सुधि-करुणा मौदऽगल्यायन
खुलते बिम्बसार-युग के स्वर्णिम वातायन
कभी पाटलीपुत्र देश का गौरव-स्थल था
चन्द्रगुप्त के विजय-खड्ग में भारत-बल था !

वैशाली-गणतंत्र सुविकसित था प्रकाश से
स्वयं बुद्ध अत्यन्त प्रभावित थे विकास से
रुके नर्त्तकी अम्बपालिका के कानन में
आया था वैराग्य-प्रात उसके आँगन में

लिखूँ कहाँ तक मित्र, भव्य भारत की महिमा
अब तक है अक्षुण्ण देश की उन्नत गरिमा

महाहर्षवर्द्धन तेजस्वी वर्तमान सम्राट्,
नीतिनिपुण, साहित्य-मुकुट
प्रतिभा-सम्पन्न मधुर व्यक्तित्त्व विराट्।
कला-चेतना से अनुप्राणित प्राण,
कभी नही मुख म्लान।

प्रबल दस्युदल उनके बल से शान्त,
वसुधा कभी नहीं दुर्भिक्षाक्रान्त!
नालंदा पर नृप की कृपा महान्
करते वे प्रयाग-संगम पर पंचवर्षीय दान,
उत्सर्गित नित संचित कोष-कृपाण

वर्तमान युग के प्रिय कवि श्री बाण—
करते नालंदा का गति-सम्मान

राज्यान्तर्गत विद्यालय-संचालन का—
मंत्रणा-कक्ष में आया जब प्रस्ताव,
कहा उन्होंने—

"ज्ञान-भारती-मन्दिर रहे स्वतंत्र
रक्षित हो विद्यानुरागियों से ही शिक्षा-तंत्र,
ऋषिकुल-पालित परम्परा का हो आन्तरिक विकास
फैले वसुन्धरा पर शैक्षिक निर्दलीय विश्वास,
नृप-वन्धन से दूर रहे मानवता का संगीत
दे किरीट अधिकृत वैभव की निरासक्त शुचि प्रीत"

भूपति की निर्द्वन्द्व-दृष्टि में जँची ज्योति की वात
दूर हो गई नालंदा में आनेवाली रात!
मित्र, स्वयं सम्राट् महाकवि एक
काव्यासन पर विकसित प्रखर विवेक।

उत्कल में जव हीनयान के क्रुद्ध भिक्षु ने
नालंदा में दिए गए राज्यानुदान का—
किया तीव्र उपहास,
हुए सत्वर आमंत्रित वहाँ विज्ञजन।
सागर-तट पर
महायान की हुई विजय मेरे प्रमाण से,
हुए अत्यधिक हर्षित नृप नव तर्क-दान से।

नम्र श्रमण लू वांग!
भिक्षु च्यांग जा रहे यहाँ से चीन,
विनयपिटक में ये हैं अधिक प्रवीण।
भूल गए अव सोयावीन, अफीम;
मन्दिर में देना तुम समुचित स्थान
लिए जा रहे कतिपय शास्त्र-पुराण।

हंसों के पंख खुले जल पर
तरुवर-छाया में केकी-स्वर
दिक्-शोभित द्रुत अम्बुद-कपास
सरि-पुलिनों पर चन्द्रिका-कास

उभरी सुधि-बाणाम्बरी-प्यास
दृग-वन में द्युति-राधिका-रास

विजयी यौवन में जयति-गीत
विधु-सी विम्बित प्रतिबिम्ब-प्रीत
कुलकुलित शरद्-सीमित जल-वल
फुरफुरित नयन-खंजन चंचल

गुण-गान-पूर्ण जब कवि-जीवन
आयोजित मातृभूमि-अर्चन

परिजन-पुरजन-मन मिलनाकुल
आकुल उर-पुर में स्नेह अतुल
नित नूतन तनु-सम्बन्ध-जाल
आशीश-भार से नमित भाल

नेत्रोपेक्षित रवि उद्भासित
आभा-अभिनन्दन आत्म-चकित

कवि का निर्मल निर्वैर नमन
उत्फुल्ल नयन में मोहन घन
भींगे स्वर से उन्नत उत्तर
श्रद्धा-विभोर प्राणान्तरतर

मृत्तिका-मोह सुख-सुधा-सिक्त
मातृका-पात्र प्रतिपल अरिक्त

ममता-प्रदेश में ही समता
कंटक-विहीन आनन्द-लता
जननी-दृग में हृदयाश्रु करुण
आमरण विपुल वात्सल्य अरुण

दुख में भी सुख-शोभा अपार
हे जन्मभूमि ! शत नमस्कार

वक्रोतिपूर्ण नव वाक्यांजलि
श्लेषोत्कर्षित रुचि-हास्यावलि
विस्मृत भुजंग-भाषा विकसित
शब्दों में कृष्ण अतीत ध्वनित

रेखा-रंजित कुहरावृत सुधि
ऊषा-उन्मीलित ज्यों अम्बुधि

आए अणिमातुर विद्वज्जन
द्रुत स्थगित प्राण-पागल गुंजन
ताण्डवित प्रसून-प्रलाप शान्त
यौवन मे ज्यों झंझा-दिनान्त

फिर बौद्धिक स्वर-विस्तार प्रखर
षट् शास्त्राङ्कित विधु-विप्र-अधर

पहुँचा पुस्तकवाचक सुदृष्टि
उत्कंठित वायुपुराण-वृष्टि
श्वेताम्बर-आवृत तन-दधीचि
अंजनित नयन में अमृत-वीचि

शुचि शिखर-बंध में फूलमाल
चन्दन से चकमक पीत भाल

आँवला तेल से शिर चपचप
उष्ट्रीय ग्रीव पर भी टपटप
ताम्बूलित फूलित कपिल-गाल
पगुराता ज्यों प्रिय पशु प्रवाल

नारीय कंठ उच्चरित श्लोक
प्रच्छन्न पाठ सस्वर अटोक

प्रारंभ पुनः शास्त्रप्रसंग
प्रिय सूचि वाण से ध्वनित छन्द
तब हर्षचरित की छिड़ी बात
श्यामल सुबन्धु ने कहा, "तात !

काव्यांश-श्रवण-हित हम अधीर
तन्मय दूरागत रसिक-भीड़

अस्तमित दिवस को देख बाण
बोले, "संध्या-वन्दना-ध्यान—
करने जाऊँगा अब तट पर,
कल मिलें पुनः हम, मित्र-प्रवर

गणपति-गृह भी उपयुक्त अधिक
वासस्थल निर्बाधित अवगिक,

उत्पलित प्रात में सम्मेलन
बालाओं का वीणा-वादन
तृण-कुटी तरल उद्यान-मध्य
उत्तुंग-पुष्प-तरु लतावद्ध

कतिपय शिरीष, चम्पक, अशोक
ऋषिआश्रम-सा आवास-लोक

दाड़िम, द्राक्षा, जम्बू, रसाल
मल्लिका, मालती, मृदु प्रियाल
खलिहान स्वच्छ गोधन-भूषित
कृत्रिम तड़ाग सरसिज-शोभित

साक्षात् मगध में मिथिला-सी
कोमल वसुन्धरा कमला-सी

विद्यालंकृत कृषि-रत किसान
यज्ञोचित नित वैदिक वितान
युग-शास्त्र-समन्वित सात्विकता
मन से लिपटी साहित्य-लता

खेतों में कविता खिलती-सी
श्रम में सुगंध भी मिलती-सी

हल-वृषभ-यत्न से शिल्प तृणित
शब्दान्न-सृष्टि से भूमि नमित
मेघों में शस्योल्लास-पर्व
कृषि-काया को गगनीय गर्व

सक्षम-श्रम-संभव कणित कोश
उद्योग-स्वेद-सीकर अदोष

किंचित् विमर्श-उपरान्त त्राण
तन्द्रान्तर में कर गिरा-ध्यान,—
खोलेने लगे पुस्तक नवीन
श्रुति-सुख-प्रवीण श्रोता अधीन

प्रकटा पुष्पित पाण्डित्य प्रखर
कीर्तित काव्यावृत विद्याधर

यश-व्याप्त चतुर्दिक सान्ध्यकाल
उतरा मन पर मानस-मराल
विष-हीन हुए कटु तिमिर-व्याल
अभिषिक्त असंशय-अन्तराल

शारदा-समादृत पंकिलता
भ्रातृत्व भाव मे स्थिर खलता

लहराए जब पुष्पांशुक पट
आए निज गृह फिर बाणभट्ट
सर्वोच्च उपाधि मिली नृप से
ईर्ष्यालु विज्ञ जन-मन हुलसे

अभिनन्दन-वंदन हुए विविध
झुक गए वृद्ध विद्या-वारिधि

मल्लिका मुखर ज्यों विधु-विद्युत्
भर अंक-पाश में नूतन सुत
वह ताक रहा स्मित टुकुर-टुकुर
बिम्बित-प्रति बिम्बित नेत्र-मुकुर

दिव्याधर पर दुग्धावशेष
दृग-दल कज्जल, तैलाक्त केश

अंगुलि-संस्पर्शित शिशु-कपोल
मृदु मुख पर चुम्बित प्राण-बोल
सुख-स्नात पितृ-हृत्तल शीतल
स्फटिकाद्रि-शृंग ज्यों चन्द्रोज्ज्वल

नासिका पकड़ द्रुत मत्त किलकित,
कुसुमित थापड़ से कलित, खिल्लित

बिखरीं स्मिति की सुख-फुलझड़ियाँ
खिलखिला उठीं लोचन-कलियाँ
आनन्द-प्रसारित शिशु-विलास
वेगित लालायित बाहुपाश

रह-रह हिन्दोलित वक्ष-हार
रुदनातुर दुग्धाकुल कुमार

निशि में नयनों की नम्र बात
नव उपालंभ की रूप-रात
वातायन पर अलसित विहान
कूकित पिक-शानित स्वर-कृपाण

दिशि-विदिशि समीरित शुकी-मंत्र
सारिका-विलोकित उषा-तंत्र

जब-जब निज भू पर विमल बाण
शोभित कुसुमित बादल-वितान
शोणित सैकत पर मुक्तादल
शुभ्रायु-सुलभ गंभीर अतल

मन प्राणमुखी, तन कर्मलीन
श्वासों पर सौरभ समासीन

द्वय पुत्र तरुण नित छन्दायित
पैतृक प्रतिमा आश्चर्यचकित
'भूषण' में शास्त्रोचित प्रवाह
उद्भासित उर-उच्छल उछाह

हो रहा अनीन्धन हृदय-हवन
गरिमा-गंधित नव मंगल मन

सप्तदश सर्ग

वैदिक आत्मा की इन्द्राणी रेखा अमौन
ध्वनि पूछ रही प्रति-ध्वनि से, तुम भिक्षुणी कौन ?
क्यों बुद्ध-वेश ?

भारत की काव्य-कला में क्यों गैरिक सुगंध ?
अन्तर-रहस्य-वेष्टित द्युति क्यों आनन्द-अंध ?
क्यों शमन-क्लेश ?

प्राणोत्तर-मनश्चित्र में तर्कित स्वर अशान्त
एकात्म-ललित चेतना रुग्न श्रीवर्ण-भ्रान्त
दुर्भर प्रहार

अन्तर्वैदिकता-ऋद्धि-एकता छिन्न-भिन्न
अन्तर्वर्ती अजगरी वृत्ति के अघृण चिह्न
अवरुद्ध द्वार

लोभोपयोग से क्षीण तीक्ष्ण ब्रह्मास्त्र-शक्ति
सुर-साधन के अक्रिय विलास में असुर-भक्ति
सम-भाव ध्वस्त

जन-वर्ण-महत्ता स्थापित ज्यों-ज्यों जन्मजात
निकला दर्शन-ज्वालामुख से चिन्तन-प्रपात
श्रेष्ठता-ग्रस्त

जागा सहिष्णु द्विज-मंत्रभूमि फिर एकबार,—
जब हुआ शून्यमय नागार्जुन-अभिनव प्रसार
संस्कृति विकसित

जाग्रत विकास-संगम पर नव हिन्दुत्व सबल
अब आर्य-द्रविड़-शक-शवर-किरात अटूट धवल
तन मन-गुम्फित

काव्यांकित गुह्य ज्ञान सामासिक वृत्त भाव
कम हुआ विष्णु-ब्रह्मा-शिव से बौद्धिक तनाव
रसमयी दृष्टि

साकार तीर्थ-संस्कार-ऐक्य-आबद्ध गात
सम्पूर्ण देश-दर्शन-दिग्दर्शन-आत्मसात्
अवतार-सृष्टि

संस्कृत-मंदिर में रूपायित अरूप-गायन
प्रारंभ शास्त्र पौराणिक, गीता, रामायण
स्थिर हृदय - सूत्र

गात-सिद्ध कला-कौशल परिपूरित गुप्त-काल
भारती-चरण-अंचित साहित्यिक स्वर-मराल
स्मित विभा - पुत्र

स्थापत्य-साधना से नव शोभित उपनिवेश
वाल्मीकि-व्यास के आर्य-वृत्त में द्वीप-देश
वा णी - व स न्त

बर्बर यज्ञों मे आंगिरसी आहुति पुनीत
सवृति-निष्ठित परमार्थ-ज्ञान भू-तत्त्व-गीत
अ र्थ पू र्ण अ न्त

संचित दर्शन-जल-बल से निर्मित महासिन्धु
निवृत्तोद्धार से नव त्रिवर्ग गतिमय अपंगु
सं तु लि त ध र्म

विविधा में केन्द्रित महालक्ष्य-आनन्द-किरण
अग्रज भूमण्डल पर नूतन सांस्कृतिक चरण
प रि व्या प्त म र्म

लोमशी दृष्टि से लख पौराणिक सृष्टि-विजय
बौद्धिक रेखा वैज्ञानिकता करती संचय
क्रमबद्ध सृजन

शंखासुर का सागर-तल तक जब वेद-हरण
मन-मत्स्य-शक्ति से ज्ञान-सलिल का भार वहन
तम-दैत्य-ग्रहण

ज्ञानात्म-सिन्धु-मंथन-मंदर जब निराधार
स्थिर कूर्म-पीठ पर आश्रित मन-मृत्तिका-भार
रत्नोपलब्धि

प्रलयाकर्षण में डूबी-सी जब गरीयसी
वाराह-दन्त पर हुई प्रतिष्ठित भू-कलशी
संकुचित उदधि.

जब व्याप्त हिरण्यकशिपु-दानव-यवनान्धकार
पाषाण-काल में स्तंभित नरसिंहावतार
युग प्रह्लादित

भूपति बलि-सम्मुख वामन-पग-विस्तार प्रखर
आकाश-घोषणा यही कि ईश्वर-शक्ति अमर
आत्माच्छादित

पशु-बल-विनाश-हित परशुराम-क्रोधित प्रहार
रामावतार में शील-सभ्यता-स्वाधिकार
तप-त्याग-राग

कृष्णावतीर्ण से अनासक्ति, जन-कर्म-युद्ध
मानव महानतम असुर आचरण के विरुद्ध
संग्रहित आग

हिंसा, शोषण औ' अनाचार से बुद्ध दुखित
भू पर करुणा-श्रद्धा-प्रभाव आश्चर्यचकित
नव शान्ति-विजय

संन्यास-भावना का जीवन-पथ में विकास
प्रियदर्शी से कनिष्क-युग तक अक्षय प्रकाश
मानव-निर्भय

प्रालेय कल्कि-गण-गरिमा समता-सिद्धि-हेतु
जग-जनपद पर निर्मित होंगे मनुजत्व-सेतु,
अभियान सफल

बन्धन-विभेद, रूढ़ियाँ वर्णमय नष्ट-प्राय
जन-युग-भविष्य में ओझल सर्वोन्नत उपाय
भू स्वर्ग, सकल

श्रम-साम्य-सुधा पीकर पनपे गणमय विचार
अधिकाराम्बुधि से निकले प्रतिभा-रत्नहार
सम सब प्रकार

एकतापाश में बँधे विश्व-मानव समस्त
देखे धरती नित उचित न्याय का उदय-अस्त
हो मन उदार

सागर-तट-नारिकेल-वन पर ज्यों सुधा-धार
रेखा के मानस में कल्याणी उर-प्रसार
विधु आर-पार

आकाश-सुशोभित ज्यों प्रभात में ओम्कार
वैदिकता में अमिताभ-चेतना की पुकार
रे, बार-बार

ज्यों धर्म-समन्वय से विचार-बिम्बित विकास
रेखा करती अन्वेषण समता का प्रकाश
उन्मुक्त मंत्र

ढूँढती देह के स्नेह-सत्य का समाधान
केवल विदेह ही नहीं मूर्त्त मानव-विधान
सम-सिद्धि-तंत्र

सीता से ज्यों गीता आगे, त्यों प्रश्न और
तीर्थंकर और तथागत भी कालाभ्र-चौर
पूजित नवीन

जब गण-तन में मन-मनुज-दिव्यता का प्रवेश
होगा समस्त संसार मांगलिक एक देश
शिव सृजनलीन

दार्शनिक काव्य-धारा-सी रेखा आशामय
लिख देती प्राण-तरंगों पर जीवन की जय
ज्यों काल-छन्द

ढूँढती सत्य ज्यों कलापूर्ण कोमल कविता
मन के झुरमुट में कुसुम-घ्राण-रत नव सविता—
कर नयन बन्द

छन्दान्तरिक्षिणी रेखा सम्प्रति काव्य-पीर
भारती-प्रौढ़ आत्मा-क्रीड़ित अभिनय-शरीर
भावना-चीर

ज्यों कालपुरुष से प्रकृति-वस्त्र-ऋतु-वरण-हरण
जीवन-दर्शन में सदा कलात्मक परिवर्तन
चिन्तन अतीर

अम्बुधि पर ज्यों आवेगपूर्ण तैरता पवन,
हिल-हिल उठता हिल्कोरों से तरणी का तन
नाविक डगमग,

चन्द्रिका-रन्ध्र में रेखा करती वाण-ध्यान
वाणी में ज्यों गुंजित विराट् का ब्रह्म-ज्ञान
अनुभव जगमग

ज्यों कवि से कविता भिन्न, एकता सत्यहीन
पानी से पृथक दुग्ध में ज्यों रह सके मीन
स्थिति वही आज

ऋषिकाव्य-दृष्टि ज्यों इन्द्र-व्याधि से विभा-रहित
अब आत्म-कला अमला केवल आनन्द-सहित
पुलकित प्रसाद

ज्यों मुकुलवयस्का नाग-सुता-अंशुकी लास
रेखा के सुधि-वन में अतीत-उल्लास-हास
वा ता स - गं ध

मन-उदयन-मुख में वासवदत्ता-वृ ह् र क था
भूली-भूली-सी प्रीतिकूट की मधुर व्यथा
वह निशा अंध

सिकता पर सोकर अभय वाण के संग वात
डुबकियाँ लगाती रही शोण में चन्द्र-रात,
ज्योत्स्ना - प्र भा त

भागती हुई हिरणी के पीछे दौड़-धूप
मृगया-पथ में ज्यों रूप-भूप-संगम-स्वरूप
दु ख ही न गा त

निशि-द्रविड़-नाट्य-मुद्रा में वंकिम भ्रू-कटाक्ष
यक्षिणी-संग ज्यों सान्ध्य अंक में सुप्त यक्ष
क ल क ल नि ना द

स्वप्निल कलिंग-क्रीड़ा में विदिशा-निशा-राग
नयनों में अमरावती-रम्य सरसिज-तड़ाग
वा रु णि - प्र मा द

प्राणों में जिस दिन खिला फूल का छन्द एक
गल गया स्वयं ही मानस-गिरि का हिम-विवेक
कौस्तुभ - अन्तस्

श्वासों पर छाई कल्पवृक्ष-वक्रोक्ति-छाँह
अमरत्व-कुंज तक व्याप्त हुई उर्वशी-बाँह
रस-कलश दिवस

चतुरंग-चाल-सी भाव-भंगिमा घूर्ण-घूर्ण
अन्तर-मंदिर का काल-विश्वकर्मा अपूर्ण
रिक्तता सदा

जीवन-सीमा में ही असीम आनन्द-अर्थ
जन्मान्तर में संभव अतृप्त साधन समर्थ
वाणी शुभदा

शृंगार-सृष्टि में ही घनत्व की मधुर वृष्टि
रुक्षता-जुगुप्सा भरे भाव में दिव्य-दृष्टि
रस में रसेश

आत्माभिव्यंजना-पूर्ण स्वप्न में सत्य-अंश
ज्यों प्राण-सरोवर-पद्मपत्र पर शुभ्र हंस
निशि में दिनेश

टूटी जब अन्तर्लीन प्राण-तन्द्रा अकथ्य
आभासित अक्षपाद-सा अन्तर्मना-तथ्य
फिर भाव भंग

रेखा के सम्मुख रुग्न वाण-प्रतिबिम्बि-किरण
रोता-रोता-सा आकुल-व्याकुल उन्मन मन
मूर्च्छित प्रसंग

ज्यों मृग-शावक खींचे ब्रह्माणी का आँचल
छायाग्रह से तत्किंचित रेखा हुई विकल
ज्यों मातृ-स्नेह

राहुल ज्यों वृद्ध-निकट पैतृकता-हीन मौन,
पूछता रूप से ही अरूप, तुम कौन-कौन ?
रे कहाँ गेह?

तब से रेखा शाश्वत शतरूपा में विलीन
भूमण्डल में उड़ रही किरण-परमाणु-मीन
प्र ति प ल न वी न

कहती आत्मा, होगा जब सकल विश्व-मंथन
पाएगा मनुज असीम शक्ति का करुणा-कण
स त् - स मी ची न

भ्रमहीन ज्योति का एक ब्रह्म-उच्छ्वास जगत
अस्थिरता में स्थिरता का केन्द्रित अन्तिम मत
आ का श ए क

परि-व्याप्त अवनि पर एक मनुजता का वितान
होगा भविष्य में कभी विश्व-संस्कृति-विहान
भा स्क र - वि वे क

अन्तर्वर्ती अभिलाषा नित जोहती बाट
होगी चरितार्थ किसी दिन मानवता विराट्
ज न-मु क्ति-यु क्त

विभ्राट् धर्म-विज्ञान-कला होगी अभिन्न
उन्मुक्त प्रखरता से मानव-अन्तर अखिन्न
स म - वि भा - भु क्त

अष्टदश सर्ग

कैलास के तुषार-पाश से आबद्ध
देव-प्रदेश के
केलि-कुंजों में चिर स्थिर
स्वर्गीय काव्य-विलास-स्वप्न की—
रमणीय अन्तःपुर-वासिनी
हे कमनीय अलका-वधू !

आज से अनेक-अनेक शती पूर्व
रामगिरि पर आमंत्रित आषाढ़ के प्रथम दिवस में
कामातुर कल्पना-हस्त से
लिखा था मैंने एक मेघ-पत्र
जिसे इन्द्र के काल-दूत ने
तुम्हारे कोमलतम करतल में अवश्य रख दिया होगा !

हस्ति-श्रेणियों की भाँति सूँढ़ हिलाते हुए
श्यामल बादलों से मैंने कहा था :
विरहाकाश के हे श्रावण-विमान !
उड़ते-उड़ते तुम्हें
अमरलोक के उस उद्यान-भवन में जाना है
जहाँ शिव-शिखर से छिटकती हुई चाँदनी
खिलखिला कर कंठालिगन करती है सुर-संलाप का।

व्योम-मार्ग पर तुम्हें उमड़ते-घुमड़ते देख,
प्रवासी-पथिक-प्रियाएँ
घुँघराले बालों को ऊपर फेंक-फेंक कर
प्रिय-मिलन-कामनाएँ करती हुई
अनायास तुम्हें देखेंगी टकटकी लगा कर।

उस समय चातक-संगीत-लहर-पथ को
पार करती हुई बलाका-पंक्तियाँ पहुँचेंगी तुम्हारे पास
प्रणयोत्सव मनाती हुई।

कमल-वनों में,
सुनेंगे जब राजहंस तुम्हारे तुमुल घोष,
उत्कंठित चंचुओं में मृणाल-अग्रखण्ड का पथ-संबल ले-लेकर
उड़ेंगे तुम्हारी श्यामलता के संग-संग।

लम्बी यात्रा में विविध स्रोतों का जल पी-पीकर
कहीं-कहीं गोपाल कृष्ण के मोर-मुकुट-सा
इन्द्रधनुष की शोभा से चमत्कृत होते रहना,
और,
जनपद-वधुओं के चकित भ्रू-विलास को देख कर
रुकना मत मेरे मेघ-विहंग !

उत्तर की ओर मुड़ने के बाद
आम्रकूट पर क्षणिक विश्राम करते हुए
विन्ध्य पर्वत के सानु-कुंज में नर्मदा से मिलकर,
फुल्ल कदम्ब, भागती हुई हिरणियाँ और
वन्य-गजों की क्रीड़ा के साथ-साथ
कहीं-कहीं
मयूरी-नृत्य भी देखना तुम !

फिर दशार्ण देश के
केतकी और जामुन-वन को पार कर
विदिशा की वेत्रवती नदी से प्यास बुझाना
और निचले पर्वत पर बसेरा के बाद
यूथिका-वन में फूल चुननेवाली वनिता-मुखश्री पर
किंचित छाया करते हुए आगे बढ़ना।

उज्जयिनी के शुभ्र प्रासादों की ऊँची अटारियों पर
विद्युत्-चकित रमणी-चितवन का
यदि सुख नही प्राप्त किया तुमने,
तो समझना कि तुम ठगे गए।

स्वर्गांश अवन्ती की कमलमयी शिप्रा में
गंधाकुल सारसो की मन्द्र-मधुर ध्वनि भी सुनना सखे !
और
स्वर्ण धूप में केशराशि सुखाती हुई रमणी-श्वासों की
सुगंधि से अवश्य थकान दूर करना।
महाकाल-मन्दिर की संध्याकालीन पूजा के अवसर पर
वारविलासिनियों का चामरनृत्य
और, ताण्डव लास को देखना, मत भूलना तुम।

वहाँ रात्रि के निविड़ तिमिर में
मन्द-मन्द जाती हुई अभिसारिकाओं की सरणि पर
चपल चपला की कनक-रेखा चमका कर
प्रकाश बिखराना,
गुरु गर्जन से डराना मत उन्हें।

फिर वहाँ से उड़ कर
विविध पर्वत-कन्दराओं को पार कर
हिमालय की ओर मुड़ जाना,
और,
सुरसरि के तीर पर

हिमाच्छादित सौन्दर्य-वृक्षों पर उड़ती हुई—
किरण-कल्पनाओं से आलिंगन कर
देवलोक के द्वार पर
हिम-मंत्रों को अवश्य सुनना तुम।

स्वप्नोर्वशी की जलकेलि से मन्द-तरंगित
मानसरोवर में स्वर्गीय सुख प्राप्त कर
विविध विहग-कूजित
और नद-निर्झर से बिम्बित-विचुम्बित
देवदारु-वन की शोभा से मन को तृप्त करते हुए,
दूर से ही देखना कैलास को।

और तब,
शरत्प्रसन्न अलका में पहुँच कर
ऋतु-पुष्पों से शृंगार करती हुई अनुपम वधुओं को देखना।

वहाँ जाकर मेरे सन्देश-पत्र को
कहीं गिरा मत देना बादल!
क्योंकि स्वर्ग में लोग सब कुछ खो देते हैं।

कुबेर-भवन से उत्तर की ओर
गुच्छ-गुच्छ फूलों से आच्छादित
मन्दार वृक्ष की छाया में मेरा गृह है।

अशोक और मौलश्री से सुशोभित क्रीड़ा-शैल पर
कंकणधारिणी मेरी प्रिया
मयूरांकित संध्या में
मेरी प्रतीक्षा में छवि-हीन-सी हो गई होगी।

मेरी प्रियतमा : छरहरी देहधारिणी
मुकुल कमल-सम अर्ध विकसित यौवन,
बिम्बाधर प्रकोष्ठ में नुकीली दन्तावली,
क्षीण क्वणित कटि-किंकिणी,
चकित हिरणी-सी चंचला चितवन,
गहरी नाभि,
श्रोणी-संभार से अलसित,
झुकी-झुकी स्तन-भार से वह
प्रथम कृति ब्रह्मा की !

मलिनवसना दीर्घ विरहिणी,
अश्रु-सिंचित दृगों के सम्मुख
अंक में वीणा लेकर स्वर-सिद्ध तारों पर
गूँथ रही होगी विस्मृति-विमूर्च्छित नामांकित रागिनी-हार।

बिछोह के प्रथम दिन में,
किया था वधू का जो वेणी-शृंगार—
गुँथी हुई चोटियों से,
मैं ही उसे खोलूँगा मिलनोपरान्त।

हे जलददूत !
स्वप्नालिंगित प्रिया
सुधि-बाहु-वल्लरी में अपने प्राण-पति को भर कर
नींद में किंचित् कहीं खो गई होगी वह,
तो रुक जाना तुम।

और, फिर मधुर-मधुर गर्जन कर
शीतल समीर में अमृतविन्दु का फुहार वरसा कर ही
जगाना उसे,

ताकि मालती की नूतन कलियों-सी वह
विस्मयभरे लोचन से तुम्हें देखें,—
देख कर कुछ कहने की इच्छा प्रकट करें....
और तुम मेरी ओर से प्रेषित पत्र....

अगणित वर्ष बीत गए।
बादल ने कुछ भी उत्तर न दिया;
विरह-मिलन के संगम पर
मैंने अमर कर दिया उस यक्ष को जो निष्कासित हुआ
कल्पना की रहस्यमयी अलका से।

किन्तु
मेघ-पत्र का शरदोत्तर आजतक नहीं मिला मुझे।
तब से मेरी पंचचितिक भास्वती काव्य-चेतनाएँ
योगस्तंभ हिमालय के इस पार और उस पार—
प्राण-अपान सूक्ष्म तत्त्वों मे विचरती ही रही!
किन्तु त्रिक-रहित आत्मा की लौटी हुई स्वर-लहरी
लौट नही सकी!
क्या मेघ-पत्र में मैंने उत्तर भी लिख दिया था?

पलाशवसना पार्वती की भाँति
कैलास-विलास-प्रासाद के स्फटिक-सोपान पर
स्वप्नालंकृत इच्छानुसार
चढ़ती-उतरती हुई
हे महाश्वेता कादम्बरी-कामिनी !

निस्सीम नक्षत्र-शोभिता यामिनी-काव्यांचल में
निद्रित चन्द्रमणि की मलय-श्वास-संस्पर्शित
मन्दाच्छादित सरोजवदना प्रभातसुन्दरी की
दन्त-किरण से झरती हुई
हिम-यूथिका-हर्षित भावभूमि पर
अमर इन्द्रायुध की गद्य-गति से
अनायास मैं वहाँ आया
जहाँ देव-भाषा के स्वर्गोद्यान-द्वार पर
अतुल कथा-कला के किन्नर-मिथुन ने
अधिकाधिक आगे बढ़ कर
तुम्हें देखने को—
पथभ्रान्त हिरण-सा वाध्य किया मुझे।

कल्पना की अणिमा-दृष्टि के शब्द-बाण से
अमित अभिनव काव्य-सौन्दर्यारण्य में
शिव-ध्वनित शास्त्रीय संगीत की भांति
कला-मृगया की भुवनमोहिनी छवि-छटा
प्राण-पत्रलता पर अंकित करता रहा।

अतीतकालीन काव्य-शिल्प के अजन्ता-पथ में विभिन्न
सुर-राग-बिम्बित शंख-नाल-तरंगित—
हेम-हास-प्रक्षालित मार्ग पर चलते-चलते
चतुर्मुखी महादेव के मणि-मन्दिर में
हस्ति-दन्त-वीणा पर गाई गई दुर्गागान स्तुति-ध्वनि
के मधुरतम माधुर्य-गंध-मृग के प्रदर्शित मग पर ही
कैलास ने मुझ से पूछा:
कालिदास की काव्य-सीमा लांघ कर
कहाँ आ रहे हो तुम?

कोमल मधुमास के मलयमारुत से चन्द्र-तरंगित अनंग-ध्वज-सा
आक्षोद-सरोवर-तट की मदन-सुन्दरी की बाहुवल्लरी पर
आच्छादित अर्ध विकसित पुष्प-गुच्छ को भाव-भृंगाघात से
चांदी के पानी में हिलते देख कर
क्षणभर
नव यौवना शकुन्तला की वल्कला रमणीयता की भाँति
मेरी उत्तरोन्मुख मुस्कान चुप-सी रही!

पर मुझे कहना ही पड़ा
कि इस बार
आत्म-लावण्य के अमृत-पंक में
केवल दो ही काल-कमल मिले!

संकेत के प्रतिध्वनित शब्द-पट पर
हिम-किन्नरी ने तमाल-पत्र के स्फुरण-रस-सिक्त
कोमल कनिष्ठिका-नख से
आर्या छन्द की दो पंक्तियाँ लिखीं
और मेरी तरलिका-दृष्टि ने
स्वर्ण शिखर पर
चन्द्र-तुषार की चूती हुई भाषा पढ़ ली !

काम-नृत्य से पूर्व पुष्पवृष्टि की तरह
देखते ही देखते
सहस्रों मयूरों के दृष्टि-सुख से सिंचित
विविध सौन्दर्य-घाटियों से उमड़ते-घुमड़ते मेघ
विराट् श्वेत-हस्ति-कैलास के शुभ्र गिरि-श्रेणियों पर छा गए !

उस समय कामना-कृपाणिका से कटी-छटी
विश्रान्ति की तृण-शय्या पर सुप्त अचेतन मन
विन्ध्याटवी के ताल-तरु से गिरे फल के घोष से चकित
गज-दल-सा
घन-मृदंग सुनकर विस्मय-विभोर हुआ !

और, क्षीर-सिन्धु के उल्लसित अमृतफेन की रजत राशि से
निकलती हुई जय-लक्ष्मी-सी
नन्दन-कानन में गीत-झकोर भरनेवाली
पद्म-पुलकित श्वेत सरोवर से
रूप-रंभा निकली।

ताम्बूलवाहिनी वक्रोक्ति-तमालिका-जैसी
बड़ी-बड़ी आँखोंवाली
गन्धर्व-गायिका के आत्म-प्रस्थान में
मदिरा-रस में भीगे-भीगे
और किरीट-किरण में सूखे,
लम्बे-लम्बे लहराते सुगंधित बाल
जब उड़ते-से कपोत में क्षण भर के लिए उलझ-से गए,
नव पल्लवित शाल्मली वृक्ष की एक झुकी डाली पर
पंक्तिबद्ध बैठी हुई हरी-पीली पाँखोंवाली पहाड़ी सारिकाएँ
एक अपूर्ण श्लोक रचती हुई
सलिल-दर्पण देखती-देखती
दूर-दूर-दूर तक उड़ कर
फिर वहीं आकर चहचहाने लगीं !

व्यास-आसन पर प्रतिष्ठित कालिदास-कलाकृति-सी
शास्त्र-स्कंध पर कविता-कलश उठानेवाली—
महाकाल-मन्दिर में ललित लास्य रचने वाली उज्जयिनी—
के कथा-कुमार की चित्र-दृष्टि से
त्रिपुण्डधारिणी तपस्विनी नारी के श्वेतांक में
झंकृत वीणा के वायुमण्डल में
केतकी-कुहेलिका देख कर
ऐसा लगा कि वह इन्द्र से पूछ कर
मदन-देह के निमित्त त्र्यंबक-साधना में तल्लीन है।

हिमालय से हिरण-गति में भागती हुई निर्झरिणी-सी
जब गीत की अन्तिम श्वास
देव-चरणों को छूकर
दिवसाकाश-गंगा-सी मलिन हो गई,
तब तुमने मुझे देखा हे महाश्वेते !

तपस्या-सम्पन्न किसी उपेक्षित महाकवि की भाँति
युग-दैत्य के सशक्त वक्ष पर अमरत्व के अमिट चरण
ज्यों वर्तमान की सीमा पर भविष्य-पूजित होते हैं,
संस्मरण के अतीत-पवन वसन्त से लिपट कर चले गए !

तब हे बिछुड़ी-बिछुड़ी यक्षिणी अर्ध वधू !
तुम्हारे स्वागत-संकेत के अभ्र-जाह्नवी-उद्गम तक
मैं पूर्व परिचित पाहुन-सा
कुछ कहता-सुनता अग्रसर होता गया।

स्फटिक गुफा तक पहुँचते-पहुँचते
गैरिक गिरि से झरझराते झरनों के सदृश
प्रगाढ रक्तवर्णा संध्या
कमल-वन की निद्रित खिलखिलाहट—
के रेशमी वस्त्र को समेट कर
आकाश-अवतीर्ण गजगामी अंधकार में
धीरे-धीरे-धीरे छुप गई !

और तब,
अक्षमाला पर लगी हुई समाधि में
संध्योपासना के पश्चात्
तुम्हारे चन्द्र-कपोल पर प्रवाहित नयनामृत को
प्राणांजलि में भर कर आत्म-कलश में रख दिया मैंने।
किन्तु पुरातन पीड़ा की स्मृति-लहर उठती ही रही;
क्योंकि
संसार में वियोग ही संयोग का तप है !

अगस्त्य ऋषि के समुद्र-पान की तरह
कैलास पर उदित ज्योति-सिद्ध सूर्य ने
ब्राह्ममुहूर्त्त में ही तिमिर-पारावार पी लिया !

उसी समय
झुण्ड के झुण्ड स्वर्ण भेड़ों से विम्वित तड़ाग—
की निकटवर्ती उपत्यका से युगल नीलकंठ पंछी
चंचु-पुट में कीटाहार लिए
शिरीष वृक्ष पर नहीं बैठ कर
जव रक्ताशोक पर उतरे
कि युवावस्था में भ्रमणोपरान्त प्रीतिकूट-प्रत्यावर्तन की भाँति
हम हेमकूट आए।
तव हे काव्यमोहिनी कादम्वरी !
पुनर्दर्शन की उस रोमांचित वेला मे
तुम्हारे लाल-लाल होठ,
लम्वी नासिका,
पूर्वालिंगित ग्रीवा
और मिलन-विलास देखकर
मै आर्य-सौन्दर्यकोश का एक-एक रूप-शव्द भूल गया !

तभी,
तुम्हारे हिलते आभूषण निरख
और मणि-बंध-कंकण-झनकार सुनकर
सुन्दरता-सागर पर लिखित उर्मि-मंत्रों से
कामना के सप्तर्षि-वन में चन्द्र-होम करने लगा मै !

स्मरण है,
मधुरता की मदलेखा का पग-प्रक्षालन,
सागरिका, मृणालिका, निपुणिका, कदलिका प्रभृति का
स्वागत-संभाषण

स्नेह्-केयूरक का निपुण वीणा-वादन,
मणि-दर्पण में सलज्ज नयनों का नूतन अभिनन्दन !
महाश्वेता के अपरिचित आग्रह से
भारतीय वधू की प्रथम रति-रात्रि की भाँति
लज्जा-जाल में यौवन की अव्यक्त जय करती हुई
आकांक्षा-अंगुलियों से तुमने मुझे
जो प्रणय-ताम्बूल दिया था,
उसकी उच्छ्वसित सुगंध
श्वासों में स्वर्ग-संगीत भर-भर देती है !

प्रमदवन में क्रीड़ा-पर्वत के रत्नमय प्रासाद में
चक्रवर्ती सम्राट् के युवराज अतिथि-सा
जब मैं महानन्द-शय्या पर लेट गया
और तुम
कल्पना-सौध से मुझे निष्पलक दृष्टि से देख-देख कर
दिन में ही काव्याभिसार का स्वच्छन्द अभ्यास करने लगी,
तब मैं तुम्हें
किसी के स्कंध पर हस्त रख कर मात्र झुकी-रुकी ही नहीं,
अपितु
वक्ष-कमल को पद्मालिंगन करते देख
स्वयं संकुचित-सा हुआ था !

विलासवती उत्कंठा से प्रेषित
संश्लिष्ट स्वप्न की असंदिग्ध केलि-सहचरी पत्रलेखा को
हेम-प्रासाद में छोड़ कर जब मैं
कृपाण की एक ही चोट से कटे ताल-वृक्ष-सा
भूमि-भाव-परिवर्तन से अतंद्रिल हुआ,
देखा
कि कल्पना-प्रसूतिका-गृह-द्वार पर

वंदनवारों के बीच-बीच में लटकी हुई कनक-घंटियाँ
शब्द-वायु के मन्द स्पर्श से हिल-हिल कर
टुनटुनाती हुई सहज श्लेष-पुरन्ध्रियों के संग-संग
चित्राह्वान कर रही हैं !

गोबर, गेरू और कपास-पुष्प से निर्मित अल्पना-चक्र पर
चिपकाई हुई चित कौड़ियों के मध्य में
नवीन भाव-जन्म की प्रज्ज्वलित दीपाभा से
मंगलग्रह-सी गर्भ-शोणिमा प्रकट करती हुई
शिल्पी-श्री अवतीर्ण हुई !

जब मैंने सृजनमयी की चम्पक कान्ति देख कर
पिंगल-रहस्य-ग्रंथि के अनायास खुलने की
जाबालि-जिज्ञासा व्यक्त की,
मेरे मन का वैशंपायन शुक
बृहस्पति-पिंजर से उड़कर
किरात-कामिनी के इच्छानुसार
विदिशा-प्रासाद में कथा-विस्तार करने लगा।

एक बार फिर
कैलास के धवल-विमल स्कंधावार में
हर्षोत्सव मना कर
जब मैं स्थाण्वीश्वर पहुँचा
तब अमरलता परिचारिका बोली :
'पत्रलेखा को रंगभिक्षा अधिक नहीं मिली महाकवि !

और, इस समालोचना की लहर पर
लहराती हुई, आदिकवि की उर्मिला भी आई,
अमिताभ-पत्नी भी मुस्काई,
किन्तु
मुझे कहना ही पड़ा कि सृष्टि की सर्व शिल्पकला की भाँति
कादम्बरी भी अपूर्ण है, अपूर्ण है देवि !

स्वर्गीय काव्य की प्रतिक्रिया से
भविष्य के भू-गर्वित कवि
उपेक्षित मृत्ति के असंख्य गीत रचकर
अभाव में भाव भरते रहेंगे अमरलते !

भविष्य-भाषा के स्वत्वशास्त्र से निकलनेवाली
हे बन्धनहीन गण-वाणी !
छन्द-रुद्ध काव्य के घूर्णित भूमण्डल पर
कभी होगा प्रवहमान शब्द-प्रलय;
उन्मुक्त सृष्टि के उस असह्य आरंभ में
संभव है, उपेक्षा और उपहास के वज्रनाद का—
अर्थहीन, अनर्गल प्रसाद स्रष्टाओं को प्राप्त हो
किन्तु
व्यष्टि-पीर की उत्तप्त श्वास की गत्यात्मक झंकार
काल-संशोधन की चित्रार्पित अतस्तंद्रा को छूकर
दशों दिशाओं में परिव्याप्त होगी ही।

प्राचीनता के घ्राण-रन्ध्र-शून्य नयन में
होगा जब विद्युत्शैली में अश्रु-कोलाहल,
उस समय हे प्राणान्दोलित काव्यसुन्दरी !
जागरूक मौलिकता के मनोहरण हाव-भाव के
उष्ण पाश में श्लथ पद्यर्बियों को भर कर
भद्र वाग्बाण अवश्य चलाना।

वेणी में श्वेत फूल खोंस कर
जब जल-दर्पण में अपनी श्यामवर्णा मुखश्री देखेंगी
और, भाद्रघटा में कड़कड़ाती हुई विजली-सी खिलखिलाकर
हीरक-जड़ित नासिक-नोंक को
किसी अधीर काव्य-पुरुष के चरणों पर
लजा कर झुका लेंगी

और फिर···
शृंगार की डोंगी पर चढ़कर कभी उस पार,
कभी इस पार
कभी मध्य धार में शाकुन्तल-हस्त में
आन्दन-पतवार लेकर
तिरस्कृत मिट्टी की भापा में भाव भर देंगी
और
वनस्थली-गिरि-गोद से आती हुई हवा की—
ग्रामीण-गंध लेकर
जब पलाश-स्कंध पर चढ़ती हुई मालती-लता की भाँति
सप्रसन्न प्राणों पर अपने आपको झुका देंगी

और आत्म-शिल्पी,
तैलाक्त केशराशि पर, प्रेमांगुलियों से
स्नेह-सौन्दर्य का स्वप्न-श्लोक रच देगा··
तब हे धूल-दुकूलधारिणी संगीते!
प्रबुद्ध पाठकों को श्रुति-सुख की शेफाली-सुरा पिलाकर
ग्राम-भारती के पर्ण-मन्दिर में धीरे-धीरे ले जाना।

वहाँ शैलेय इन्दु के अधर से झरती हुई पिंग ज्योत्स्ना से
धरती को धोकर
दिवस में खिलने वाले फूलों को रोपना
और, मनुष्य की महामुक्ति का माधुर्य बिखराना।

क्षणिक प्रभुत्व के दंशित दंभ से मत्त-प्रमत्त––
विनयहीन राजनीतिज्ञ
अपने अहंकार-नेत्र से
कला-शिल्पियों का करेंगे जब मर्यादा-भंग,
हे निर्मले वीणावादिनी !
अप्रतिष्ठा के कालकूट पीनेवाले अपने सभी शिव-साधकों को
कम से कम आध्यात्मिक आश्वासन अवश्य देना
और,
चाटुकारिता के तृण को खोंट-खोंट कर
राजपुरुषों के मिथ्यामृत-सिक्त दस्यु-दन्तों को
घृणित हस्त-कौशल से खोदने वाले––
साहित्य-भ्रष्ट लोभियों को
बार-बार स्वत्व-चेतना देकर
कंचन-प्रमाद अवश्य कम करना।

यह सर्वविदित है
कि शासन का अधिकार-दीप
अपनी चतुर प्रभा बिखेर कर
चिर निद्रा में विलीन हो जाता है
किन्तु
शब्द के अमर शिल्पियों की कला-वर्तिका
क्षीण भले हो जाए
पर बुझ नहीं सकती !

यदि राजतंत्र के कुहरावृत प्रकाश में
काव्यर्षियों के उचित मूल्यांकन में ह्रास होने लगे

तब हे आत्म-त्रिपथगे !
कठोर काल के क्रूर नयनों में
सहृदयता की प्राचीन अश्रु-धारा भर कर
उसके अशोभन दर्प को अवश्य मिटाना
अन्यथा
अनासक्त साधना की आत्म-रेखा
सिकुड़ कर शून्य में विलीन हो जाएगी !

ईश्वर न करे
कि भविष्य का कोई कवि शासनान्तर्गत रहे
और, छन्द के अस्तित्त्व में अपने मुक्त ब्रह्म को बंदी बना ले
क्योंकि हे कविते !
काव्य के काल-सिहासन पर बैठने के लिए
आत्म-निरंकुशता अपेक्षित है—अनिवार्य है !

एकोनविंशति सर्ग

अश्विनी ज्योति, बुझना न अभी
पीयूप-प्रभा देती रहना
श्वासान्धकार की लहरों में
रश्मिल रहस्य-गाथा कहना

मत काँप, पराक्रम-प्राण-शिखे !
उद्दीपित झंझावातों में
चण्डिका-मंत्र-ताण्डव रन्ध्रित
अन्तिम यात्रा की रातों में

आकाश-कुसुम, झरना न अभी
वैदिक सुगंध बिखरानी है
आत्मा की रंग-तरंगों पर
तिरती कनकाभ कहानी है

संयत माँझी, तज अज-प्रमाद
प्रालेय प्राण में कर प्रवेश
सौन्दर्य-स्रोत की सीमा से
अब देख तलातल-अगम देश

साधना-विहग, उड़ना न अभी
कुछ गीत शेष हैं श्वासों में
भरना है कलरव अभी बहुत
कल्पना-केलि-उच्छ्वासों में

रुकना न अभी मेरे प्रवाह,
उत्तुंग शृंग से झरना है
अन्तिम पथ के पाषाणों से
अब अन्तर-बल से लड़ना है

सारस्वत पूजा शेष अभी—
लक्षित संस्कृति के मन्दिर में
इच्छित निर्झरिणी ओझल-सी
स्वर-शब्ददेश के हिमगिरि में

विश्वास-वीचि के वृन्तों पर
आत्मोत्पल अब तक खिले नहीं
भूमा-वसन्त के भाव-भ्रमर
अन्तिम पराग से मिले नहीं

ओ मेरी अन्तिम प्राण-ज्योति,
उर-पथ आलोकित कर देना
अन्तिम तट के हिलकोरों पर
आकांश-किरण भी धर देना

काव्यर्षि बाण अब करुण-करुण
भीगी आँखों में लाली-सी
ज्योतिष के दृढ गणनानुसार
आनेवाली अँधियाली-सी

अब प्राण-पूर्णिमा दूर नहीं,
बीती यौवन की जयी रात
हिमकणिका की शीतलता पर
जाग्रत अन्तस्-हेमन्त-प्रात

प्रतिभाशाली प्रिय सुत भूषण
जा रहा मगध स्थाण्वीश्वर से
हो गए मुक्त कवि बाणभट्ट
अति कष्ट-पूर्ण शीतज्वर से

आदेश दिया फिर आने का,
उडु के हित प्रेषित किया नमन,
आश्वासन दिया वधू को भी,–
नयनों में बिम्बित शोण-सदन

दृग से ओझल जब हुआ पुत्र,
स्वर्गीय मित्र का किया ध्यान
बिखरा कपोल पर एक श्लोक
: रे काल प्रबलतम महाप्राण

है व्यर्थ गर्व जीवन-जय का,
यौवन का अहम् निरर्थक है
मिथ्या न कभी दिव्यात्म-घोष
निष्काम कर्म ही सार्थक है

प्रत्येक श्वास वन्दना-कली
प्रत्यक्ष अश्रुकण अर्घ्य-नीर
जीवन ही है देवता दिव्य,
पावन मन्दिर नश्वर शरीर

हो गई भूल मुझसे रे मन,
तज ज्योति, किया सौन्दर्य-स्नान
जो पाप-पुण्य से रहा दूर
मैं प्रीतिकूट का वही बाण

मेरे प्राणों के कलाकार!
जीवन-यात्रा हो रही शेष
तुम कह न सकोगे क्या अब भी
दृग से ओझल वह कौन देश?

गाने की इच्छा प्रबल, किन्तु
स्वर ही होने को है समाप्त
हो रही अभी से ही नृप के—
नयनों में मेरी पीर व्याप्त

सस्मित न देख कर मुझे कृष्ण,
कुछ सजल-सजल-से हो जाते
ममता की मोहक मिट्टी पर
ये प्राण बहुत ही अकुलाते

है घिरे बाण के सभी द्वार
भूपति-पण्डित-प्रतिहारों से
पूजा किसकी हो रही सफल
अविरल वीणा-झंकारों से

करनी है पूरी कादम्बरि
अतिशय संशय-कोलाहल में
खोजूँ कैसे मैं अमृताक्षर
रे काल-सिन्धु-हालाहल में

मानस-सीमा पर रुग्न शान्ति,
संभव न स्यात् सप्राण गान
अन्तिम रचना - शृंगार - हेतु
आकुल-व्याकुल-सा भट्ट बाण

मेरे प्रदीप, बुझना न अभी
प्रालेय ज्योति में जयति-नाद
गुंजित श्रमता का श्वास-घोष
: अब क्या प्रमाद, अब क्या प्रमाद

इच्छावशेष - इंगित अन्तिम,
देखूँ दृग से दार्शनिक समर
सम्राट् हर्ष के प्राणों में
स्थापित हो शाश्वत ब्रह्मस्वर

वात्स्यायन-कुल का मंत्रध्वज
फहरे, लहरे मणिमय शिर पर
बरसे अविरल चेतना-कुसुम
अभिनव भारत के मन्दिर पर

आएँ स्थाण्वीश्वर उडुपति भी,
फैलाएँ सांख्य-सुतर्क-जाल
मेरे जीवन में ही जागे
वैदिक स्वर से भारत विशाल

हो अरुण विभा से दीप्त देश,
उत्तुंग हिमालय हो अरुणिम
प्रतिपल लहराता-सा समुद्र
जागरण-किरण से हो स्वर्णिम

व्योमिल आत्मा का हो प्रभात
मानवता के भूमण्डल पर
व्यापकता के उदयाचल से
फूटे प्रकाश का निर्झर-स्वर

सँगमरमर के समतल भू पर
ज्योत्स्ना-सरिता ज्यों बहती-सी
क्षीरोज्ज्वल कवि की अभिलाषा
नृप-अन्तर में कुछ कहती-सी

आक्षोद-सरोवर-पुष्पों पर
ज्यों चन्द्रचूर्ण-कण झरता-सा
अन्तिम कविता का आत्म-अर्घ्य
हर्षित उर को तर करता-सा

कामना-महाश्वेता शिव को
अन्तिम संगीत सुनाती-सी
अन्तराकाश की वाणी में
झिलमिल-झिलमिल छवि आती-सी

दार्शनिक यज्ञ का दृढ़ होता
संकल्प सत्य का, लेता-सा
दिशि-दिशि के विद्वन्मण्डल को
आकुल आमंत्रण देता-सा

कवि बाणभट्ट के प्राणों पर
अन्तिम परछाईं पड़ती-सी
जीवन की अन्तिम घाटी में
चमकीली किरण उतरती-सी

अन्तस्तल के अरुणाचल पर
शिव की स्वर्गंगा आती-सी
आलोक-अप्सरी पुलिनों पर
नूपुर के बोल सुनाती-सी

मन की वनदेवी के मुख से
पूर्णिमा-सुधा-जल गिरता-सा
कैलास-केलि-कम्पित सरि में
कलहंस-कलाधर तिरता-सा

ज्योत्स्ना-सागर पर कुमुदमयी
कविता आलिंगन करती-सी
कामना-चकोरी हिम-तरु पर
शशि-मुख में चुम्बन भरती-सी

अन्तिम सपनों का देश अभी
अज्ञात सुरभि बिखराता-सा
धीरे-धीरे कल्पना-लोक
कुसुमित धरती पर आता-सा

मत काँप प्राण की स्वर्णशिखे !
मधुरिमा अभी आने को है
कोमलता की कमनीय घटा
दृग-अम्बर में छाने को है

हे मृत्यु-मुक्ति ! मत हो अधीर
साहित्य-सुरा पी रहा वाण
अन्तर-तरंग से निकल रहा
स्मित प्रभाच्छन्न काव्यात्म-ज्ञान

संस्कृति-विलास-रत उराकाश,
अभ्युदित अतल में काव्य-धर्म
मस्तक पर अंकित काल-तिलक,
अवगत प्राणों को कला-मर्म

विश्वास-विपिन में ज्योति-यज्ञ,
श्वासों में निष्ठित अगरु-धूम
चहुँ ओर घोर अमरण झकोर,
आकुल अन्तर्मन, झूम-झूम

विंशति सर्ग

कल विमल बाण-इच्छाभिषेक
अन्तस्तल-बल-वाणी-विवेक
दार्शनिक आज आए अनेक
हर्षोत्सव

गैरिक वस्त्रावृत ह्वेनसांग
दिङ्नाग-सदृश दिव्याङ्ग-अंग
दर्शक में दिग्दर्शन-प्रसंग
महिमा नव

उर्मिल उत्सुकता यवांकुरित
विस्मयता-घाटी घन-घूर्णित
द्युति-चारु चकित मन-प्राण हरित
वासन्ती

जन-स्वस्ति-श्वास में स्वत्व-गंध
ज्यों कादम्बरी-कला-प्रबन्ध,
छू रही नीलिमा-नलस्कंध
दमयन्ती

शास्त्रार्थ-कुक्षि विस्तृत विशाल
भव्यता यथा मणि-ग्रथित जाल,
पाटल-प्रसून में ज्यों प्रवाल
श्री-शोभा

नव रत्नालंकृत मुख्यस्थल
ज्यों इन्द्र-ताल में तड़ित-कमल
मुक्ता-माणिक-नीलम-द्युति-दल-
चन्दोवा

कनकासन पर विद्वन्मण्डल
सामन्त, दूतगण, मंत्री-दल
सौरभ-सुत-हित हीरक-हृत्तल-
उच्चासन

सब राजरमणियाँ यथास्थान
ज्यों काव्य-योजनाबद्ध बाण
सर्वोच्च शृंग पर महाप्राण-
सिंहासन

कवि-कक्ष-दीप-द्युति तिमिरावृत
सुधि-सुप्त अचेतन मन झंकृत
स्वप्निल सुख-पथ प्रतिपल विस्तृत
रेखांकित

वेणी-विलास-अंबेन्दु-हास
कमनीय कामना-करुण प्यास
क्षण-क्षण में ही पंकिल प्रकाश
तम-दंशित

चन्द्रिका-लिप्त नैशावसान
दृग-निद्रित बाणाम्बरी-गान
इति-स्वप्न-विसर्जित कवि महान
द्युति-दोलित

फणधराबद्ध श्रीहर्षचरित
मणि-रश्मिल कादम्बरी हरित
छाया-छवि यह आश्चर्यचकित
कवि-कल्पित

झुक गया तुरन्त श्रीकंठध्वज,
लें सहृदय पावन पद-रज
अब रहे निपुण जन अरथी सज
राजोचित

झुक गया तुरत श्रीकंठध्वज,
लेते सहृदय पावन पद-रज
अब रहे निपुण जन अरथी सज
" राजोचित

झुक गया तुरत श्रीकंठध्वज,
लेते सहृदय पावन पद-रज
अब रहे निपुण जन अरथी

झुक गया तुरत श्रीकंठध्वज,
लेते सहृदय पावन पद-रज
अब रहे निपुण जन अरथी सज
राजोचित

झुक गया तुरत श्रीकंठध्वज,
लेते सहृदय पावन पद-रज
अब रहे निपुण जन अरथी सज
राजोचित

झुक गया तुरत श्रीकंठध्वज,
लेते सहृदय पावन पद-रज
अब रहे निपुण जन अरथी सज
राजोचित

जब अमरलता गृह में आई
शव देख साश्रु वह चिल्लाई
दृग-दृग में घोर घटा छाई
अकुलाई

दारुण कोलाहल मचा तुरत
शोकाकुल मस्तक श्रद्धा-नत
उडु-ह्वेनसांग-भूषण आगत
परछाई

विह्वल विस्मय-पीड़ित कुमार
निस्तब्ध मंत्रिगण बार-बार
पूनम-प्रभात में अंधकार
अति दुखमय

आकुल-व्याकुल सम्राट् द्रवित
गणितज्ञ-बुद्धि-बल चकित-चकित
शव निरख, सजल करुणा-सिंचित
लोचन द्वय

झुक गया तुरत श्रीकंठध्वज,
लेते सहृदय पावन पद-रज
अब रहे निपुण जन अरथी सज
राजोचित

आर्योचित शान्ति-पाठ सस्वर
शेषांजलि-वेला कर थर-थर
श्रीहर्ष-स्कंध पर मृत भास्कर
भू-गर्वित

शव-यात्रा में सैनिक-प्रयाण
निर्वाक् नागरिक-स्नेह-दान
स्वर्गीय वाण-हित दुखित प्राण
पथ शोकित

आए सब सरस्वती-तट पर
भूषण-नेत्रों में शोण-लहर
क्रन्दित माता का वंदित स्वर
उर-मूर्च्छित

सावित्री-रक्षित उठे बाण
सहसा रेखा का किया ध्यान
सत्यालिंगित संतुलित प्राण
परिरंभित

वेदाम्बुधि में ज्यों बौद्ध-लहर
उपनिषद-उर्मि में भौतिक स्वर,
अगणित सुतर्क-परिवर्तित नर
उत्कर्षित

विक्षोभ-वीचि में मुक्त मनुज
विधि-वृष-विरुद्ध गति-विद्युत्-भुज
दिग्ध्वनित सिन्धु में चित्ताम्बुज
रवि-विकसित

बन्धन-विहीन स्वप्नांकित पथ
चालित भविष्य में समता-रथ
इति-निशि में आगत अरुणिम अथ
युग-ईप्सित

छायाम्बर में अरुणारोहण
चेतना-सुपर्णा-कल-कूजन
नव प्राण-पत्र पर करुणा-कण
मन-गंधित

रेखा-स्वर-गिरि पर हैमवती
अन्योक्ति-पार्वती पूर्व सती
शिव-केलि-कला कवि बाण-व्रती
निःइन्द्रित

सौन्दर्य-शिखर-तन निरावरण
गुंजित दिगन्त में आत्म-चरण
स्वर्णाम्बर में कल्पना-हरण
वसुधाश्रित

रेखांजलि में रमणीय सृष्टि
ज्यों कामरूप पर कुसुम-वृष्टि
उडु-जड़ित चन्द्रिकोच्छ्वसित दृष्टि
ऋतु-रंजित

आलोकित स्कंधावार ध्वनित
संगीत-चरण रवि-किरण-क्वणित
भारती-मंत्र दिशि-दिशि मुखरित
जय भारत

अब प्रीतिकूट जा रहे बाण
सँग मे उडु, भूपण, ह्वेनसांग
अति विकल शोण-हित सजल प्राण
सुधि-जाग्रत

दृग-पथ मे रेखा रंगमयी
कविता-सी तुंग तरंगमयी
दिनमणि में चन्द्र-प्रसंगमयी
इन्द्राणी

हेमाभ-रश्मि-अक्षरा-कला
अवगुंठित कान्ति-सलिल कमला
उर-अभिव्यंजित आभा अमला
कल्याणी

मन-संगम पर संचित हिलोर
यौ व न - रसाल-अलिमाल-डोर
सुधि-गंध काकली-स्वर-विभोर
ऊर्जस्वित

ऋत-पंचचितिक में अजिरवती
विश्वास-संग स्वन-सरस्वती
आत्मा अपान में परा-सती
श्री-ज्योतित

ज्यों विष्णु-ब्रह्म-रत सृष्टि-तंत्र,
बाणात्मा में ऋग्-अशिति-मंत्र
अनिरुक्त ध्वनित निश्वास-यंत्र
सारस्वत

दिक्काल-पंख पर प्राण-भानु
सोमाणु-व्याप्त रुचि-मनस्वान्
अंगिरा-नयन में गिरा-ध्यान
देवोन्नत

अन्तर-सुमेरु पर गंगोत्सव
शिव-शृंग-पाश में प्रभा-प्रणव
नयनान्तरिक्ष में ओपश-भव
भू-प्रार्थित

मानसी सिद्धि-संदीप्त हृदय
रेखायित छन्दोवेद-विजय
चित्रिणी अक्षरा-व्योमोदय
संकल्पित

विज्ञान-काव्य में आत्म लीन
प्राचीन साधना अब अहीन
वात्स्यायन-सुत ऋषि-ऋत-प्रवीण,
मन चेतन

वैदिक प्रकाश-परिपूर्ण प्राण
परमेष्ठिन वैश्वानर-वितान
वंशोचित शान्त्यानन्द-ध्यान
ज्योतिर्तन

शाश्वत प्रवाह में तिग्नि भक्ति
आकाश-अनुचरा वरा-शक्ति
करुणा-केन्द्रित अरुणानुरक्ति
निष्कामा

आग्नेय देह से ध्वनित श्लोक
कवि-श्वासों में आवृत त्रिलोक
ममते! अब यात्रा-क्रम न रोक
अभिरामा

कैलास-वृन्त पर शिव-विलास
त्रहिमल बाँहों में दिशाकाश
अदभुत्, असीम अन्तिम विकास
इति भी अथ

चिर महाकाव्य ब्रह्माण्ड अखिल
अक्षर अनन्त झिलमिल-झिलमिल
विभ्राट् काल अणि-अणु-पंखिल
गतिमय पथ

मैं सोम-सिक्त अम्बरित बाण
उस प्रीतिकूट से दूर प्राण
आनन्द-अस्थि चेतन-प्रधान
उर्ध्वात्मा

अर्चना-श्वास प्रज्ञा-प्रेषित
उत्क्रान्त अदिति-मन चक्रोचित
ज्ञानानुरक्त उर अन्वेषित—
परमात्मा

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
ङ	३०	वेस्ट मिनिस्टर अवे	वेस्ट मिन्स्टर अवे
६४	१०	अणिमारि	आणिमादि
८८	१८	चारू	चारु
१०६	७	मरिंच	मरीचि
१५२	३	नियंत्रहीन	नियंत्रणहीन
१५८	१५	करती	भरती
१९८	११	पिक-तन	पिक-तान
२१३	११	तामल	ताल
२२०	८	अनचित	अनुचित
२८१	३	रहुँगा	रहूँगा
२९३	१४	–सा	–सी
२९७	१६	धलों	धूलों
३०६	११	वाय-देश	काव्य-देश
३२६	३	हुत्तल	हृत्तल
३२६	१४	ाव	नव
३३०	४	गात	गति
३५०	२२	पदन-देह	मदन-देह
३५४	२२	ात्रलेखा	पत्रलेखा